Digitized by eGangotri

21142

मधुकण

दीनू भाई पन्त

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

डुग्गर के कवि और उनकी कविता भाग–४

मधुकण

Madhukan

दीनू भाई 'पन्त'

Deenoo bhayee pant

क़ल्चरल अकादमी जम्मू–कश्मीर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

D81M
D46M
21142 Rs1.50
@24.4.60

मूल्य : १.५० नये पैसे

प्रकाशक : कल्चरल अकादमी जम्मू-कश्मीर

मुद्रक : विजय प्रिंटिंग प्रेस जम्मू

चित्रकार : पं० संसार चन्द

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सूची-पत्र

क्रम		पृष्ठ
१	परिचय	क
२	मधुकर	
	(क) परिचय	१—७
	(ख) कविता	८—२८
३	वेद दीप	
	(क) परिचय	२६—३१
	(ख) कविता	३२—५६
४	पद्मा देवी	
	(क) परिचय	५७—६१
	(ख) कविता	६२—८०

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

ये काव्य-संग्रह

कल्चरल अकादमी, जम्मू कश्मीर की स्थापना रियास्त के सांस्कृतिक तथा साहित्यिक पुनर्जागरण में एक महत्व पूर्ण योग है। इस से रियास्त की प्रादेशिक भाषाओं के विकास को निश्चित बढ़ावा मिलेगा।

डोगरी जम्मू प्रान्त की प्रमुख प्रादेशिक भाषा है। पिछले २०–२५ वर्षों में नए साधकों की साधना के फल स्वरूप डोगरी ने अपनी साहित्यक दरिद्रता को दूर करने में काफ़ी सफलता प्राप्त की है। रियास्ती जीवन के इस जन युग में डुग्गर के इस सांस्कृतिक जागरण का अपना ऐतिहासिक महत्व है।

अकादमी ने अपने जीवन के पहले वार्षिक प्रकाशन कार्य–क्रम में डोगरी के कुछ प्रमुख कवियों के जीवन तथा काव्य–साधन के सम्बन्ध में पाञ्च काव्य-संग्रह तैयार करने का कार्य हम पाञ्च साथियों को सौंपा था। समय केवल एक महीने का था। हम पारस्परिक सहयोग और सहायता से ही इस कार्य को निभा सके हैं।

पुस्तकों का कलेवर अस्सी (८०) पृष्ठ तक सीमित होने से प्रत्येक पुस्तक में तीन तीन कवियों की काव्य–साधना का तथा जीवन का व्यापक परिचय तो कराया नहीं जा सकता था। इन संग्रहों का मुख्य उद्देश्य है। डोगरी न जानने वाले सहृदय पाठकों को डोगरी की प्रमुख काव्य–प्रवृत्तियों का यत्किञ्चित परिचय देना। हम इसमें कहां तक सफल हुए हैं यह आप देखें।

ये पुस्तकें 'डुग्गर के कवि और उनकी कविता' माला के अन्तर्गत लिखी गईं। इनके नाम हमने कवियों के काल तथा काव्य–प्रवृत्ति के अनुरूप अलग अलग रखे हैं, जैसे नीहारिका, अरुणिमा, प्रातकिरण, मधुकण और मगधूलि।

हम अकादमी के अभारी हैं कि उन्होंने हमें यह गौरव पूर्ण कार्य करने का अवसर दिया।

पुस्तकों के लेखक सम्पादक :

१. दीनू भाई पन्त
२. राम नाथ शास्त्री
३. शम्भु नाथ
४. मधुकर
५. तारा स्मैलपुरी

डोगरी संस्था, जम्मू
होली—१९५९

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

श्री केहर सिंह 'मधुकर'

रूप जुगा दा बदलै करदा इक्कै पलटा खाना,
पलें खिनें दी गल्ल छड़ी, हुन बिन्दक जोर गै लाना !

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

श्री मधुकर

श्री केहर सिंह 'मधुकर' का जन्म १६ मार्ग शीर्ष सं० १६८५ (वि०) में डुग्गर के एक प्रसिद्ध गांव गुढ़ा सलाथिया में हुआ। यह गांव सलाथिया राजपूतों का पुराना गढ़ है। 'मधुकर' के पूर्वजों ने प्रायः फौज में ही नौकरी की है। 'मधुकर' के पितामह रियासती सैना में कप्तान थे और पिता स्व० कृपाल सिंह जी मैजर थे। यह परिवार धन-वैभव, ज़मीन-जायदाद और अधिकार की दृष्टि मे पूर्ण सामन्ती घराना था। इस सम्पन्न परिवार में मधुकर का पालन-पोषण अत्यन्त लाड प्यार से हुआ। घर में पहली सन्तान होने के कारण समस्त परिवार का स्नेह-सम्मान इन्हें प्राप्त था।

प्रारम्भिक शिक्षा अपने गांव के स्कूल में लेकर श्री प्रताप मैमोरियल राजपूत हाई स्कूल जम्मू से मैट्रिक पास किया। इस स्कूल में विशेष रूप से शाही बिरादरी के बच्चों को ही शिक्षा दी जाती थी जिनके व्यायाम तथा अन्य अनुशासन सम्बन्धी बातों पर बहुत ज़ोर दिया जाता था। 'मधुकर' इसी अनुशासन के नीचे बगावत के अंकुर पाल रहा था, जिस का परिचय बीच बीच में उसकी उदण्डताओं द्वारा मिलता रहता था। स्कूल से निकल कर एस० पी० कालेज श्रीनगर तथा गांधी मैमोरियल कालेज जम्मू में बी० ए० तक शिक्षा प्राप्त की। सन् १६५२ में स्नेहमय पिता श्री मैजर कृपाल सिंह जी की असामयिक मृत्यु हो गई।

बाईस वर्ष की आयु में ही आपका विवाह एक सम्पन्न परिवार में में हो गया था परन्तु गृहस्थी सम्भालने की चिन्ता आपमें नहीं है। कालेज-जीवन में ही आप हिन्दी में कविता लिखने लगे थे। १६४७-१६४८ में 'मधुकर' अपने हिन्दी गीतों के कारण कालेज के अन्दर और बाहिर काफी प्रसिद्ध हो गया था। आप की हिन्दी कविता 'नर्तकी' को काफी ख्याति

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मिली। कवि-सम्मेलनों में इस १८-१६ वर्षीय युवक को मस्ती में कविता पाठ करते देखकर विश्वास होने लगता था कि इस हट्टे कट्टे मज़बूत शरीर के अन्दर एक प्रगति शील प्रतिभा विकास पा रही है।

'मधुकर' का शरीर ठिगना मगर सुडौल और मज़बूत है। चेहरा गोल, आंखें बड़ी बड़ी और मुख-मुद्रा गम्भीर है। दूर से देखने पर पहलवान सा लगता है। बातें करने में चञ्चल परन्तु चिन्तन में गम्भीर है। शारीरिक रचना की तरह ही इस की कविता भी तरुण और स्वस्थ है। उसे आप स्वस्थ हृदय के स्वस्थ उद्गार कह सकते हैं।

१९४७-४८ का समय डोगरी साहित्यकारों के लिये अत्यन्त व्यस्तता और कर्तव्य परायणता का समय था। पाकिस्तानी हमलों से लाखों लोग अपने घरों से उजड़ उखड़ कर दर-दर की ठोकरें खा रहे थे। पुँछ, राजौरी, मीरपुर, मुज़फराबाद आदि के असहाय दुःखी बेघर बार लोगों की दर्दनाक गाथाओं से सारे देश का वायुमण्डल सहमा हुआ और उदास सा हो गया था। पैसे वाले लोग रियासत से बाहिर भाग रहे थे। साधनहीन जनता भय और अविश्वास की हालत में छटपटा रही थी। पुरानी सामन्ती व्यवस्था प्रायः खत्म हो चुकी थी। भूचाल के झटके की तरह एक नई लोक-तन्त्रात्मक व्यवस्था झिझकती हुई उसकी जगह ले रही थी। यह कठिन परिस्थिति डोगरी के कवियों के लिये एक प्रबल चिनौती बन गई थी। लोगों के दिलों में हिम्मत पैदा कर के उन्हें आत्म-रक्षा के लिये तैयार करना और नये राजनैतिक परिवर्तनों के अनुरूप जातीय जीवन में नई चेतना को जगाना—बड़े ही महत्व-पूर्ण परन्तु साथ ही कठिन कार्य्य थे। हर जाति ऐसे गम्भीर तूफानों का मुकाबला करने की हिम्मत अपने उज्ज्वल अतीत की सजीव परम्पराओं से ही प्राप्त कर सकती है। अतः डोगरी कवियों ने डोगरा वीरों के बलिदानों और महान् कारनामों पर अत्यन्त जोशीली कविताएं और गीत लिखे। देश के गांव २ और नगर २ में कवि सम्मेलन किए गये जिन्हें सुन कर विपन्न और विपत्ति ग्रस्त जनता में नव उत्साह और नई आशाओं की मुस्कुराहटें पैदा हुईं। बार्डर के लोगों ने अपने २ गांव में मोर्चे बना कर शत्रु का मुकाबला करने की ठान ली। परिस्थिति सम्भलने लगी। डोगरा कवि अपने कर्तव्य में सफल प्रयत्न हुए। अब

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

जनता नए राजनैतिक परिवर्तन के बारे में विचार करने की दशा में आ गई थी। तत्कालीन राजनैतिक पार्टियां भी जनता तक पहुंचने लगी थीं।

इस तरह १९४७ से १९४९ तक का यह संक्रान्ति काल डोगरी-कविता में एक तरह से 'वीर गाथा काल' का दर्जा रखता है। इस वातावरण ने जहां डोगरी कवियों से जातीय भावना से भरी हुई कविताएं लिखवा कर जन-कवि बनाया वहां निरन्तर इसी एक देशीय जातीय चिन्तन और उसकी अभिव्यक्ति ने उन्हें सीमित सा भी बना दिया। डोगरी कविता की प्रतिध्वनि अपने ही नालों और पहाड़ों की परिधि में बन्ध गई। सन् १९५० तक पहुंचते पहुंचते जब वायुमण्डल कुछ अधिक साफ हुआ तो हमें स्वयं ही आभास होने लगा कि अब केवल जातीय-गुण-गान अपनी शौर्य पूर्ण विजयों की चर्चा समयानुकूल नहीं रही। हम भी विशाल भारत के ही अंग हैं। भारत के करोड़ों लोग हमारे हैं और हम उनके हैं। भारत के समस्त जन गण का इतिहास हमारा है। उनकी समस्याएं हमारी हैं। अतः हमें अपनी रचनाएं स्वयं ही अधूरी सी प्रतीत होने लगीं। इस परिधि को तोड़ने के इक्के-दुक्के प्रयत्न ज़रूर किए गये लेकिन एक विचार धारा पर चिर अभ्यस्त लेखनियां और मन रुकते-रुकते से मालूम होते थे। ऐसे ही समय में डोगरी-साहित्य में 'मधुकर' ने प्रवेश किया। यह १९५० का वर्ष ही आधुनिक डोगरी साहित्य के दूसरे दशक का प्रथम वर्ष था। 'मधुकर' डोगरी साहित्य के इस दशक की सब से बड़ी देन है। 'मधुकर' ने आगे आकर उस एक देशीयता के कुंठित पर्दे को फाड़ डाला और सहज में ही डोगरी साहित्य की दिशा को डुग्गर की सीमित परिधि से निकाल कर विशाल भारतीयता की ओर मोड़ दिया। उन की इसी वर्ष में लिखी गई यह कविता :—

'देसा गी बनाना ते मटाना तुन्दे हत्थ ऐ'

(देश को बनाना और मिटाना तुम्हारे हाथ में है।)

पहली कविता थी जिस में देश की जनता को देश के प्रति उन के कर्तव्य की चेतावनी दी गई है। भारतीयता के प्रतीक पुरु, पृथ्वीराज, राणा, शिवाजी तथा मीरकासिम जैसे महान् वीरों के बहादुरी और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

त्याग के वर्णन के साथ २ आम्भी, जयचन्द, मीर जाफर आदि देश द्रोहियों के जघन्य कृत्यों की निन्दा की गई है। इस कविता में साम्प्रदायिक संकीर्ण भावनाओं की तीव्र शब्दों में निन्दा करके देश के सामूहिक जीवन के शुचि आदर्श का जयघोष किया गया है :—

''फिरका परस्ती दी अग्ग जेड़े लान्दे न,
देसा आली एकता दी नीयेंगी हलान्दे न।
हाथिया दे पैरै खल्ल पैर जियां सारे औन,
इस पापा अग्गें पाप सारे हार खाई बौन।

(देश में जो लोग फिर्का परस्ती की आग लगाते हैं वे देश द्रोही देश की नींव को कमज़ोर करने का कारण बनते हैं। जिस तरह हांथी के पांव में सभी पांव आ जाते हैं उसी तरह फिर्का-परस्ती जैसे पाप के आगे सब पाप हेच हैं।)

इस कविता को सुन कर अनेकों लोगों के हृदय गौरव से खिल उठे थे। इस के बाद 'मधुकर' तथा दूसरे कवियों ने ऐसी ही कविताएं लिख कर डोगरी जनता के दिलों में भारतीय भावना को जगाया।

मधुकर का पालन-पोषण एक पुराने सामन्ती ढंग के वंश में हुआ है जिसका आंशिक प्रभाव इस के व्यक्तिगत जीवन में भी परिलक्षित होता है, जैसे कभी किसी के सामने अपने दिल की बात खोल कर न कहना, अपनी कमज़ोरियों को कम देखना—शाह खर्च तथा कामों में लापरवाही इत्यादि। फिर भी उस के अन्दर का कवि जैसे सीधे सर्वहारा वर्ग से आया हो, उस की कविता शुरू से ही श्रमिक वर्ग की वेदना से ओत प्रोत है।

उन की सन् १९५४ तक की कविताओं का संग्रह 'नमियाँ मिञ्जरां' छप चुका है। इस दशक में १९५२ और '५३ के वर्ष डोगरी कविता में नये रुझान के वर्ष थे। कई एक कारणों से राजनैतिक वायुमण्डल कुछ धूमिल सा हो रहा था। भारत विलय का आन्दोलन तेज़ होता जा रहा था। राजनीति के कुछ कर्णधार इधर उधर बगलें झांकने लगे थे। कवियों का मन कुछ कहने के लिये आकुल था परन्तु वातावरण में घुटन थी, खुल कर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बात करने का साहस तड़प रहा था। तूफान के पहले जैसे मूक मगर डरावने हालात दिखाई देते हैं वैसी ही दशा थी। कवि महसूस कर रहे थे कि जो होना चाहिए वह हो नहीं रहा है, परन्तु सीधे कुछ भी न कह पा रहे थे। सीधे कहने में बिगड़ती के और बिगड़ने का डर था। इसी परिस्थिति ने डोगरी में गज़ल को जन्म दिया। 'मधुकर' ने भी इसी समय कुछ गज़लें लिखीं जिन में फर्ज़ी इश्क के इलावा कुछ शिकवे शिकायतें भी हैं।

परन्तु गज़ल को न डोगरी भाषा रास आई और न डोगरी भाषा को यह गज़ल गोई। कारण स्पष्ट था। वास्तव में गज़ल की कला तो जागीरदाराना फुर्संतों की पैदावार है जिस में दुनिया की वास्तविकताओं से दूर कवि लोग केवल इश्क के काल्पनिक जगत में धूनी रमाया करते थे। दुनिया चाहे मरे या जिये वे अपने माशूक के नख-शिख के कसीदे कहने में धरती आकाश मिलाते थे। परन्तु आज की इस यथार्थ वादी दुनिया में न तो वह शाही प्रेमी हैं न वे कुसुम-कोमल प्रेमिकाएं। पेट की चिन्ता ने सब को दबा रखा है। दूसरे गज़ल तो अपनी अभिव्यक्ति के लिये गहरे व्यंग्य और अर्थ युक्त चिर प्रचलित सूक्तियों और मुहावरों की मोहताज है जिन के द्वारा महज़ इशारे से ही बात चल जाए। डोगरी तो, उन सीधे साधे लोगों की व्यवहारिक भाषा है जिन में अपनी पत्नी के सिवाय दूसरी नारी की चर्चा करना भी पाप और असभ्य व्यवहार समझा जाता है। इस लिये डोगरी की वह इश्किया गज़लें डोगरा समाज में अधिक आदर न पा सकीं।

इस बात को स्वीकार किए बिना नहीं रहा जा सकता कि गज़लों के इस एकान्त चिन्तन ने डोगरी भाषा का कुछ कोमल परिष्कार अवश्य किया। गज़ल के माध्यम से कविता में कवियों की व्यक्तिगत छाप भी कुछ स्पष्ट हुई। इस से पूर्व प्रायः सभी कवियों में प्रायः एक जैसी भाव धाराएं और सामान्य राजनैतिक प्रतिक्रियाएं चल रही थीं। उन में चिन्तन की दिशा भी समान थी तथा शब्दावली भी प्रायः एक सी होती थी। गज़ल की इस अस्वाभाविक प्रवृत्ति को छोड़ कर मधुकर ही सब से पहले जीवन के यथार्थ की ओर आया था। १९५३ के बाद की कविताओं में 'मधुकर' की अपनी खास विशेषताएं उभरीं हैं। "चर्खा", "कोहलू", "युगा दी आस", "डोली" आदि उनकी कविताएं डोगरी साहित्य की अमर कृतियां हैं। १९५६

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri
में 'मधुकर' ने अचानक रेडियो की नौकरी छोड़ दी। इस जगह से निकलने के बाद उस ने लाखों मुसीबतें झेलीं। अपने और बेगानों के उलाहने और व्यंग्य बरदाशत किये लेकिन उस के कवि हृदय की साधना अबाध गति से चलती रही। सन् १९५६ से ही मधुकर डोगरी कविता को अपनी साधना से निरन्तर नए उपहार देता आया है। एक दिन उसने जैसे डोगरी काव्य-साधना में एक देशीयता से ऊपर उठकर राष्ट्रीय गौरव का आवाहन किया था वैसे ही आज उस की कविता हमें विश्व जनीन भ्रातृ-भाव की मधुर अलापें सुना रही है। इस दिशा में उनकी कविताएं, 'मनां दी वेदना' 'रस्ते दा प्रण', 'गरीबी', आदि सुन्दर कृतियां हैं।

बहुत से मित्रों का कहना है कि 'मधुकर' की कविता राजनीति से प्रभावित रहती है और कविता को राजनीति से अलग रहना चाहिए। इसके साथ ही वही लोग कहते हैं कि कविता को जीवन की संगिनी होना चाहिए। इन दोनों धारणाओं का अन्तर्विरोध आज बड़े ही स्पष्ट रूप में सामने आ गया है। हो सकता है कि आज से कुछ वर्ष पूर्व पहली धारणा में सत्य नहीं तो मसलहत शायद रही हो, परन्तु आज जब राजनीति जनजीवन, और जनजीवन ही राजनीति बन गये हैं तो कविता को राजनीति से दूर रखना जनजीवन से दूर भागने वाली बात होगी। जनजीवन की प्रत्येक गतिविधि आज इस प्रकार राजनीति में घुल मिल गई है कि जीवन के बारे में कुछ भी कहिए राजनीति के तार अपने आप झन झना उठते हैं। 'मधुकर' जनजीवन का गायक है इसी लिये उस की कविता को सुन कर जनता झूमने लगती है। उसे 'मधुकर' की कविता में अपने जीवन की हुंकार-झंकार सुनाई देती है। जन-जीवन की बात को न सह सकने वाली राजनीति ही शायद ग़ल्ती पर है, और उसे कभी न कभी अपनी यह भूल सुधारनी होगी।

भाषा की दृष्टि से 'मधुकर' की कविता को अभी बहुत कुछ संवरना बाकी है। अभी तक वह भावों के आकाश में ही ऊंची से ऊंची उड़ाने ले रहा है। असल में मैं कहना यह चाहता हूँ कि 'मधुकर' का शब्द-विन्यास ठीक डोगरी जैसा न होकर हिन्दी-उर्दू की शैली से प्रभावित है। उसकी प्राथमिक कविताओं में कला पक्ष की जो कमज़ोरियां थीं बाद की कविताओं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

में कम होती गईं हैं। वह अपनी आलोचना ध्यान के साथ सुनता है और कमज़ोर कविताओं को निर्ममता के साथ फाड़ डालता है। कुछ मुक्तक कविताओं के प्रयोग भी उसने किये हैं। 'मधुकर' की कविताएं काफी लम्बी होती हैं। शब्दों का प्रयोग बड़े खुले हाथों किया जाता हैं। गागर में सागर वाली बात पैदा करने के लिये उसे अभी और साधना करनी है।

कुल मिला कर 'मधुकर' एक विकासमुख प्रतिभा है। मुझे इस विचार से गौरव होता है कि 'मधुकर' जैसा होनहार कवि मेरा अभिन्न मित्र है और उस के द्वारा हमारे युग के डोगरी साहित्य को बहुत कुछ प्राप्त होगा। आगे के पृष्ठों में 'मधुकर' की कुछ प्रतिनिधि कविताएं हिन्दी रूपान्तर के साथ पेश की जा रही हैं। अपनी कविताओं का यह हिन्दी पद्य-अनुवाद 'मधुकर' ने ही किया है।

—दीनू भाई 'पन्त'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

जुगै दी आस

ए टोली कुड़ियें-चिड़ियें दी अपनी गै खेडा लग्गी दी,
नि दुख कसाले दुनियां दे, हिरखा दे धागें बज्जो दी।
इनें इट्टां-टोट्टे जोड़ी ऐ निक्का नेआ मैहल बनाए दा,
ते रंग-बरंगी लीरें'ने उसी सुन्दर शैल सजाए दा।।

इक पासै टोली कुड़ियें दी किछ गीत ब्याह् दे गा करदी,
इक कल्ली उद्दर बैठी दी फुल्लें'ने बेद सजा करदी।
अड़ियो ! ए सोमा कुत्थें गेई, ओ अज्ज ते खूब गै सज्जी दी,
अज्ज लगन न ओदी गुड्डी दे कम्में काजें बिच बज्जी दी।।

तां दौड़ा दी, त्वां नस्सा दी, इसी रोका दी, उसी टोका दी,
केइएं दे कम्म सराह् करदी केइएं'ने घोखां घोखा दी।
बिन्द झांकी मारो मैहला'च, इक समां नराला छाए दा,
इक पासै गुड्डा बैठा दा, उन्न खिलका कुरता लाए दा।।

लत्तें पर चुस्त घट्टना ऐ, साफे पर स्हेरा बन्ने दा,
दूरा दा ईयां सेई हुन्दा, परसानू मन्ने तन्ने दा।
ए दुर्गो दा गुड्डा ऐ जिन्ने जान्नी ओदी चाड़ी दी,
ते दुऐ पासै दिखो हां, बिन्द शोभा एदी लाड़ी दी।।

ए सोमां दी गुड्डी ऐ, संगचोई दी शरमाई दी,
सालू दी बुक्कल मारी दी ते नीमीं नजर झुकाई दी।
हत्थें बिच्च शैल कलीरे न, बामें गी चूड़ा पाए दा,
किज भज्जी-त्रुट्टी चीजें दा गुड्डी लेई दाज बनाए दा।।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

नन्ही बालिकाओं की गुड़ियों की कथा का सहारा लेकर 'मधुकर' ने, कवि के व्यापक स्नेह से सींच कर यह एक अमर रचना डोगरी साहित्य को दी है।

युग की आशा

ये नन्ही कोमल कन्याएं, क्रीड़ा में अपनी लगी हुईं,
जग के दुःखों से दूर अभी, हैं प्रीत-डोर में बंधी हुईं।

कुछ टुकड़े पत्थर ईंटों के, ले सुन्दर महल बनाया है,
और रंग-बिरंगे वस्त्रों के खण्डों से इसे सजाया है॥

इक कोने में गायक टोली मंगल मय गाने गाती है,
इक कुशल बनी, मंगल-मण्डप फूलों से उधर सजाती है।

अरिओ, यह सोमां कहां गई ? है आज बड़ी ही सजी हुई,
हां लग्न हैं उस की गुड़िया के, होगी कामों में लगी हुई॥

कभी भाग इधर, कभी दौड़ उधर, चिन्ता से हो बेहाल रही,
कइयों का काम सराह रही, कइयों के दोष निकाल रही।

इस महल में आकर झांको तो, क्या समय निराला छाया है,
खिलके कुरते में सजा हुआ, गुड्डा दूल्हा बन आया है॥

टांगों पर चुस्त है पाजामा, पगड़ी पर सेहरा बान्धा है,
देखो तो दूर से लगता है ज्यों छैला है, कोई राञ्झा है।

हां दुर्गी का यह गुड्डा है, बारात यह जिसकी आई है,
और उधर वह गुड्डी सोमां की इक बहू बनी शरमाई है॥

वह छुई-मुई सी गठड़ी बन, कैसे सकुचाए बैठी है,
वह लाल ओढ़नी लिए हुए, नज़रों को झुकाए बैठी है।

मणिबन्धों में कलिहार बन्धे, औ' चूड़ा लाल सुहाया है,
टूटी फूटी सी चीज़ों का, सब दान-दहेज बनाया है॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

ए आदि-अन्त सृष्टि दा, ए खेड जुगें दी कहानी एें,
ए इक्क नेई दी दुनिया एें, ए बलदी जोत नरानी एें।

कोई लौका नईं कोई बड्डा नईं, कोई भेत नि रूपैं रंगा दा,
नि मैल मलाबट दुनियां दी, ए निर्मल पानी गंगा दा ।।

कुतै हासे न, कुतै रोसे न, ए रुस्सै दी ओ मन्नै दी,
ए चा'ने चीज बना करदी, ओ जानी-जानी भन्नै दी।

अन जाने बिन्द क् लग्गी गेई, ओ दिखो कियां रुस्सी गेई,
'जा तेरे कन्ने नईं कूना' ए गल्ल आखी ते बुस्सी गेई ।।

जे हसदे हसदे दिक्खै कोई तां अपने आप गै हसोई जन्दा,
कोई तरला नईं,कोई मिनतां नईं,झट अपने आप मनोई जन्दा ।।

ए बचपन मुण्ड जुआनी दा, ए नमीं पनीरी अमनां दी,
ए लैहर मिला दी लैहरा'ने, इक गंगा दी इक जमना दी ।।

ए नमां ध्याड़ा खुशियें दा, रातीं गी साम्बन आवा दा,
ए हाड़ चढ़ेदा मेदें दा, कण्डें गी हाम्बन आवा दा।

ए काहली ओस मनुखता दी, जेड़ी अन्दर बार तलोफा दी,
ए चानन ओदो अक्खीं दा जेड़ी न्हेरे थारें तोसा दी ।।

औं नमें जुगा दा गीतकार तां गीत में इन्दे गा करनां,
औं इन्दे रस्ते सोता नां, औं इन्दी बत्त सजा करनां।

ए राही कोमल भोले न, ते रस्ते न्हेरे काले न,
तां सुच्ची आसें-मेदें दे, में ज्हारां दिए बाले न ।।

हिरखा दे नीर बरा करनां, जे नमीं पनीरी सुक्कै नईं।
भाखें दे भाग जगा करनां, जे आस जुगा दी मुक्कै नईं ।।

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

यह आदि-अन्त है सृष्टि का, यह अमर कहानी जीवन की,
यह दुनिया समता-ममता की, यह जोत सुहानी जीवन की।

कुछ ऊंच-नीच का भेद नहीं, न रंगत का बटवारा है,
दुनिया की रज में भी रहकर, गंगा की निर्मल धारा है ॥

कहीं झगड़ा है, कहीं हंसी है, इक रूठी, एक मनाती है,
यह चाव से काम बनाती है, वह उस को ठेस लगाती है।

अनजाने ठोकर लगने से, वह उसी जगह हो ढेर गई,
'जा तुम से हम नहीं बोलेंगे', इतना कह कर मुंह फेर गई ॥

उस ने मुस्का कर देख लिया, उसका सब रोष हुआ पानी,
मनुहार नहीं जिसने जानी, यह उम्र सुहानी मन भानी।

यह बचपन मूल जवानी का, यह अमन के अंकुर न्यारे हैं,
यह लहर लहर से लिपट रही, गंगा-यमुना के धारे हैं ॥

यह नई प्रात है खुशियों की, तम नैश मिटाने बढ़ती है,
यह बाढ़ नई आशाओं की, तट अपना पाने बढ़ती है।

बेकली है यह मानवता की, जो बन्धी रही, मजबूर रही,
आलोक यह उस के नयनों का, आलोक से जो है दूर रही ॥

मैं नूतन युग का गीतकार, तो गीत मैं इनके गाता हूँ,
मैं इनके रस्ते साफ करूं, मैं इनकी राह सजाता हूं।

ये राही कोमल भोले हैं, ये रस्ते धुंधले काले हैं,
इस कारण ही आशाओं के मैंने ये दीपक बाले हैं ॥

मैं नेह के जल से सींच रहा, ये अंकुर हरियाली पाएं।
गीतों के भाग्य जगाता हूँ, युग की आशाएं मुस्काएं ॥

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

डोली

अज्ज कुसै ने तांग मना दी सूऐ रंग रंगाई,
कलि खिड़ी, मुस्काई, पी कै भौरें शा घबराई ।
सौ अरमानें सालू बनियै स्होल जुआनी थागी,
कजला बनियै पैन्नी हीखी नैनें अन्दर जागी ।।

प्रीत-गली दे मोड़ै उप्पर आइयै राही भूरै,
झकदी गै, मन संगदा की ऐ, के घोखै के घूरै ।
डोर नमीं मन भाई, पी बी पैहली तार निं त्रुटदी,
अगली मंजल आले मारै, पिछली तांग नि छुटदी ।।

भाग भरी अम्बड़ी भोली ने ममतें बिच पलेटी,
औं खिलरी दी आस ही उस ने गोदा लेई समेटी ।
की लोरी दे गीत सुनाए, की सौ लाड हे लाए ?
की ममता दी सीर ओ सुक्की, अपने होए पराए ?

जिस बाबल ने गोद खडाया गल लाया, परचाया,
मेरी तोतलियें गल्लें हा, मन जिसदा भरमाया ।
की ओ हिरख बसारे बाबल, फुल्ल बने की डारे,
गैलीं दै बिच्च रुलदे कैसी ओ हिरखा दे स्हारे ।।

ए अंगन सब मैहरम मेरे, ए गैलीं पन्छानूं,
ए पत्थर सब साथी मेरे, ए पत्तन सब जानूं ।
सुन्ने-सुन्ने अज्ज चुगानै सूंकन सूंकां भूरे,
दादी कत्थ सुनागी कुसगी कुन्न भरगी हुन डूरे ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मायके से ससुराल को जाने वाली नव-वधू के मन की द्विविधा का इस से अच्छा चित्रण भारतीय कविता में भी शायद ही हुआ होगा! लम्बी कविता के कुछ अंश यहां दिये गए हैं।

डोली

आज किसी की मन की आशा लाल हुई हर्षाई!
कलि खिली मुस्काई, फिर क्यों भौरों से घबराई?

अरमानों ने रक्त-चीर बन, यौवन गले लगाया,
नेह बना काजल की रेखा, नयनों में मुस्काया॥

प्रेम गली के मोड़ पै आकर, पथिक तरुण क्यों भूरे?
सकुचाते पग, सहमा सा मन, क्या सोचे क्या घूरे?
नूतन बन्धन में बन्ध कर भी, पहली तार न टूटे,
अगली मंजिल बांह पसारे, पिछली चाह न छूटे॥

माता ने ममता के आञ्चल की क्यों दी मृदु छाया?
मैं बिखरी आशा थी उसने, चुन कर गले लगाया।

क्यों लोरी के गीत सुनाए, क्यों थे लाड लगाए?
सूखी क्यों वह ममता-धारा, अपने हुए पराए?

जिस बाबुल ने गोद खिलाया, प्यार किया बहलाया,
मेरी तुतली बातों ने था मन जिस का भरमाया।
क्यों वह स्नेह भुलाया बाबुल, फूल बने अङ्गारे?
इन गलियों में बिखरे क्यों वे ममता के उजियारे?

यह आंगन-भू परिचित मेरी, ये रस्ते मन भाने,
ये पाषाण सखा सब मेरे, पनघट सब पहचाने।

आज हुआ क्यों आंगन सूना, आह से छाती डोले,
कौन सुनेगा कथा रात को दादी मां बिन बोले?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

पे बछोड़े, आले मारन ए रुक्खें दियां छामां,
हाम्बी हाम्बी रस्ते रोकन ए बेलें दियां बामां।
नां अम्बड़ी जानें थमां रोकै, नां कोई देएं दलासा,
साम्बो भाईयो, तुस घर अपने, साड़ा दूरें बासा ॥

रत्ते चूड़े बन्धन बनी गे, नत्थ बनी गेई डोरी,
ए बचना दी बद्धी चलो एं देस बगानै गोरी।
बंगां ऐ हत्थकड़ियां बनियां, ए कड़ियें दी बेड़ी,
ए जोबन गै बैरी बनेयां हत्थें बिपता स्हेड़ी ॥

पतले पतले ओठ नमाने लाज सूई ने सीने,
मन-मोती गी बेदी लैना सबर-कटोरे पीने।
कोई झिड़कै, लख बंगारै, मन मारी सब सहना,
अम्मा दित्ती सीस मिगी ए, बाबल दित्ता गहना ॥

देश बगाने, लोक अनजाने, नमियां नमियां रीतां,
सजरे साथी, बिखड़े पैण्डे, मेरियां स्होल प्रीतां।
कुन जानै में गोल्लो बनना, कुन जानै में रानी,
खबरै कियां कियां लिखी ऐ उस बिदना ने क्हानी ॥

घियाँ, भैनाँ, कनकें आंगू राईयां बाबल हाली,
जम्मे ओंकर अत्त सुहाने उस्सरने दी काहली।
होई मठोईयां, सौ बल पौन्दे, बाबल भाग सरान्दा,
खीर, खलाड़ें दा कोई नेन्दा कोहलें कैद करान्दा ॥

मना'च सौ सौ आसां मेदां, सौ डर झक कसाले,
मन मेरा ए स्होल, डरा दा, सुनी, दपासीं आले।
बल्लें बल्लें चलेओ काहरो, आस मेरी अत्त भोली,
साम्बी साम्बी पैर टकाएओ, डोलै नईं बिन्द डोली ॥

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मुझे पुकारें छूटने वाले, ये वृक्षों के साए,
बल्लरियां पथ रोक रही हैं, कोमल बांह बढ़ाए।
माता की ममता क्यों सूखी, मुझे न क्यों वह रोके ?
भाइयो रहो, चले हम घर से, परदेसी अब होके ॥

रक्तिम चूड़ा हथकड़ियों सा, 'नथ' धर्म की डोरी,
जनक-वचन-बन्धन में बन्ध कर, दूर जा रही गोरी।
गजरे पाश बने हाथों में, पाज़ेबें हैं वेड़ी,
निज यौवन ही हुआ है वैरी, राह दिखाए टेढ़ी ॥

चंचल होंठ हठीले अपने, लाज सूई से सीने,
मन सोती है बिन्धवा लेना, सबर-प्याले पीने।
कोई झिड़के, दोष निकाले, मन मारे सब सहना,
जननी ने आशीष यही दी, जनक दिया यह गहना ॥

देश बेगाने, लोक अनजाने, और नई सब रीतें,
कठिन डगर सब नए हैं साथी, कोमल नूतन प्रीतें।
दासी बनना लिखा भाग्य में, या बनना महारानी,
कौन पढ़े, उस विधना ने है कैसे लिखी कहानी ?

बेटी तो है फसल खेत की, बीजे बाबुल-हाली,
मृदु अंकुर में है बढ़ने की, चाह बड़ी मतवाली !
जैसे जैसे उभरे पौदा, बाबुल प्यार बढ़ाए,
और अन्त में खलिहानों से कोई चुरा ले जाए ॥

अरमानों का मेला मन में, भय मिश्रित आशाएं,
दोनों ओर से आ आवाज़ें ? रोकें और बुलाएं।
धीरे धीरे चलो कहारो, आस मेरी अति भोली,
सम्भल सम्भल कर पांव बढ़ाना, डोले न यह डोली ॥

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

चरखा

कूँ ऊँ ऊँ दिन रात करै चरखा !

औं निक्की नेई ही पञ्जें सत्तें बरें दी,
रोंदिया गी माऊ मिगी पालकी'च पाया हा।
पूनियें ते कौडियें ने इसी हा संगारेया,
एबी तदूं मेरे कन्ने सौरै घर आया हा॥

अपने प्योके दी ही मिगी जदूं याद औंदी,
डाइयै पसारी इसी बल्लें बल्लें गान्दी ही।
एदे तालें सौ सौ ताल ही ठुआलदी,
एदे कन्ने गल्लां करी मन परचान्दी ही॥

कूँ ऊँ ऊँ जदूं चरखा ए गान्दा हा,
इयां हा बजोन्दा माँ लोरियां सनान्दी ऐ।
तन्दू आला हत्थ मेंरे गलै सिद्दा औन्दा हा,
इयां हा बजोन्दा मां गलै कन्ने लान्दी ऐ॥

हत्थें कत्ती सूतरै दी तन्दूं गी हा जोड़ी करी,
शैल नेया ओदा में रेजा बनवाया हा।
लाल मेरी गोदा जेका आया हा पलोठी दा,
निक्का नेया कुरतू में उस्सै दा सिआया हा॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

चर्खा भारतीय नारी-जीवन का चिरन्तन साथी है। इस कविता में मधुकर ने एक जीवन की करुण कहानी में चर्खे के सुरीले स्वर बड़ी कुशलता से भरे हैं।

चरखा

रैण दिवस कूं कूं के स्वर में गाता है चरखा !

मुश्किल से मैं सात वर्ष की हूंगी नन्हीं सी गुड़िया,
सिक्त नयन थे, भग्न हृदय था, मां ने डोली डाला था।

कोड़ी, पूनी, कलिहारों से इसे सजाया ममता ने,
मेरे ही संग इस साथी को दे दिया देश निकाला था॥

जब नैहर की याद सताती, छूटे बन्धन कसते थे,
गलियारे में रख कर इसको धीरे धीरे गाती थी।

इस के तालों पर मैंने भी सौ-सौ ताल जगाये थे,
ममता की सौगात था चरखा, इस से मन बहलाती थी॥

कूं ऊं ऊं जब गाता चरखा, मुझ को ऐसे लगता था,
जैसे मेरी माता मुझको लोरी दे थुपकाती है।

तन्तु बढ़ते बढ़ते जब मेरे कान्धे को छू लेती,
यूं होता महसूस मुझे मां अपने गले लगाती है॥

निज हाथों से कात कात कर तन्तु तन्तु जोड़ी थी,
उसी सूत से मैं ने सुन्दर सा कपड़ा बुनवाया था।

गोद भरी जब पहली मेरी, तब आशा मुस्काई थी,
और उसी कपड़े का तब नन्हां कुरता सिलवाया था॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

इस्सै चरखे ने साथ दित्ता हा सोग्रागा दा,
इस्सै चरखे ने साथ गमीं दा नभाया हा।

सिरा दा ग्रो सांई जदूं मिगीं छोड़ी गया हा,
कत्तन गै मिगी तदूं एदा कम्म ग्राया हा।।

एदी कूं कूं मेरे सायें कन्नें बज्जी दी,
सौग इन्ने पना नईं किच्चर नबानी ऐ।

खबरै ए कदूं एदा कूं कूं मुक्कना,
सम्बनी ए खौरा कदूं सायें ग्राली कहानी ऐ।।

कूं ऊं ऊं दिन रात करै चरखा !

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

यह सुहाग का साथी मेरा, चिर परिचित उस वैभव का,
और इसी ने दुरदिन में भी मेरा साथ निभाया था।

सिर का साईं छोड़ गया था मुझे बिलखती दुनिया में,
इसी सहारे विपदाओं में अपना समय बिताया था॥

इस की कूं कूं बंधी हुई है इन श्वासों की डोरी से,
क्या जानूं यह साथी मेरा कब तक साथ निभाये गा।

क्या जानूं कब बन्द करेगा अपनी प्यारी कूं कूं यह,
क्या जानू श्वासों का रेला कब तक चलता जायेगा।

रैन दिवस कूं कूं के स्वर में गाता है चरखा!

☆

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मनुक्खता

अमर ऐ मनुक्खता ते अमर एदी क्हानी ऐ ।

गासा दे सदानै लक्खां बारी हाड़ आए न,
लक्खां बारी बदलैं बी मारू गीत गाए न,
न्हेरे दे तफानैं लक्खां बारी तम्बू लाए न,
सूरजै दी किरणैं सन्हैर अजें ऊयैं नईं,
बगा दीं ए लोई आली नैहर अजें उयैं नईं,

प्राणें दियें जोतियें दी दिब्ब ए नशानी ऐ ।

भुक्खा आले प्हाड़ैं इसी रली मिली रोकेआ,
बिपता दे जाड़ैं इसी थारें थारें टोकेआ,
लुट्टा आले खड्डें-खोलें, गत्तैं नेईं ठोकेआ,
मनुक्खता दी गंगा दी रवानी अजें ऊयैं नेइ,
जगा दी ऐ जोत ए लसानी अजें ऊयैं नेइ,

इनें जोतैं न्हेरे दी ए क्हानी गै मस्हानी ऐ ।

चाएं चाएं पुत्र लक्खां मूरतां बनान्दी ऐ,
गासा दी करोपी भन्नी भन्नी ढैर लान्दी ऐ,
गास थक्की हारी गेया मूरतां नि सम्बियां,
मानुयें दी आसा दियां नीयां नियों कम्बियाँ,

आसा आली जोतियें दी दिब्ब ए नशानी ऐ,
अमर ऐ मनुक्खता ते अमर एदी क्हानी ऐ ।।

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'मधुकर' की इस ओज पूर्ण कविता में मानवता की विजय का अटल विश्वास भरा है। इस कविता में डुग्गर के इस आशावादी कवि की वाणी का ओज देखिए।

मानवता

मानवता है अमर युगों से इस की अमर कहानी है।

अम्बर की छाती पर साथी लाखों तूफां आए हैं,
लाखों बार प्रलय-मेघों ने मारू गीत सुनाए हैं,
कई बार घन अन्धकार भी घटा टोप बन छाए हैं,
दिनकर की किरणों के साथी फिर भी गीत न हारे हैं,
युग युग से बहते ही आए ये आलोक के धारे हैं,

जीवन की ज्योति की यह तो उज्वल अमर निशानी है।

क्षुधा-गिरि ने रोका इसको शत-शत कर फैलाए हैं,
विपदाओं के गहन वनों ने इस के पथ धुन्धलाए हैं,
दानव बनकर स्वार्थ ने मग में लाखों छल दिखलाए हैं,
मानवता की इस गंगा की सबल रवानी रुकी नहीं;
अन्धकार के सन्मुख इसकी स्वर्णिम ज्योति बुझी नहीं,

इस ज्योति ने, अन्धकार की जड़ से साख मिटानी है।

रंग बिरंगे कई खिलौने, धरती रोज बनाती है,
पर, अम्बर की कटु निर्ममता क्रोधानल बरसाती है,
अम्बर की ज्वाला थक हारी, जीवन यह मुस्काता है,
अडिग रहा मानव का निश्चय कब किस से घबराता है,

आशा के दीपक की ज्योति युग युग से मस्तानी है,
मानवता है अमर युगों से इसकी अमर कहानी है।

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कोहलू

चुर-मुर चुर-मुर कोहलू चलदा, बलद चलै इक चाल,
ए जरमें दा राही बचारा, के म्हीन्ने के साल।
जजरी-जजरी टोरा टुरदा, गल ठनकै कंगरेल,
डण्डा खिचदा, बक्खर फ़िसदा, तां थोन्दा फी तेल ।।

जोरें-जोरें छांटा बजदा, पिण्डै लाहसां पौन,
अक्खीं खोपे सोज गोआची, के चेत्तर के सौन।
निक्के-बड्डे देन द्रण्डां, तेज करै बिन्द टोर,
ए बज्जे दा मजबूरी बिच, बत्त निं सुजदी होर ।।

ज्हार क्रो ए पैण्डा करदा, फी बी उयै थां,
तेली बेचै तेल बजारें नईं दान्दै दा नां।
इक बुड़ै दिन रात बचारा दुआ मौज डुआ,
के जीने दी शौंक भला फी के जीने दा चा ।।

इक कमान्दा दुआ खन्दा, इयै साड़ै साड़,
तेल बगाना, खल दुएं दीं, उसी पराना नाड़।
इयां गै बस एस जुगै दा कोहलू चलदा रोज,
मानू बनेयां दान्द बचारा, नईं सुजदी कोई सोज ।।

मजबूरी दा बज्जा टुरदा मट्ठी मट्ठी टोर,
इस्सै कारण बनै लफंगा, इस्सै कारण चोर।
विशवासें दे खोपे अक्खीं, पुट्ठी चलदा चाल,
बिच्च लचारी दै बज्जे दा, ए डाडे जंजाल ।।

2।।42

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

संसार की मानवता दो वर्गों में बंटी हुई है—शोषक और शोषित, इसी कारण संसार में अशान्ति है, तनाव हैं। शोषक के मन में करुणा पैदा होगी इस दुराशा के स्थान पर शोषित ही इकट्ठे होकर इस विपत्ति से आत्म-रक्षा कर सकेंगे।

कोहलू

चुर-मुर चुर-मुर कोहलू चलता बैल चले इक चाल,
जनम जनम का राही यह तो क्या पल, घड़ियां, साल !
धीरे धीरे कदम बढ़ाता, गुंगरू दें झंकार,
डंडा खींचे, वक्खर पीसे, बहती तेल की धार ॥

ज़ोर जोर से चाबुक पड़ता रुकती उसकी सांस,
आंख पै पट्टी, एक से उसको जेठ औ फागुन मास।

छोटे बड़े इसे दुतकारें तेज़ करे यह चाल,
बन्धा हुआ यह मजबूरी में होता है बेहाल ॥

लाख कोस की मंज़िल मारे फिर भी वही स्थान,
तेली बेचे तेल हाट पर, बैल रहे अनजान।

एक मरे दिन रात बेचारा, दूजा मौज मनाए,
क्या जीने का शौक भला यदि जीवन यूं कट जाए ?

एक कमाता दूजा खाता, यही है दुःख की बात,
तेल बेगाना खली और की, इसे पुरानी घास।

इसी तरह इस युग का चलता निर्मम कोहलू आज,
मानव बैल जुता है इस में, बिखरे हैं सब साज ॥

मजबूरी से बंधी हुई है धीमी इसकी चाल,
इसी लिए यह चोर कहाता, हाल हुआ बेहाल।
झूठे विश्वासों के 'खोपे', उलटी चलता चाल,
लाचारी ने चारों ओर बिछाया दुःख का जाल।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बेकारी दा डण्डा पिच्छें जिसगी खिचदा जा,
ग्रास मना दी, रूप तना दा, सब किज तेल बना।
फाकें ग्राला छांटा बजदा तां बिन्द टोर बदा,
सोची सोची उमर गोग्रान्दा नई लबदी कोई राह॥

तिल तिल करिऐ जलै जोग्रानी, गे जींने दे चा,
एदे तेली ऐश मनान्दे, ए बज्जा करला।
निक्के निक्के ग्राने लबदे फाकें ने करलान,
तां कोहलू दे चक्कर डाडे ग्रपनी चाल चलान॥

किन्ना चिर हुन कोहलू चलने मानु दान्द खोग्राने?
किन्ना चिर हुन मजबूरी ने ग्रपनी टोर टुराने?
किन्ना चिर हुन झूठे विश्वासें दे खोपे पाने?
किन्ना चिर हुन दान्दें ग्रांगू ग्रन्ने चक्कर लाने॥

किन्ना चिर हुन बेकारी दा डण्डा खिचदे रौना?
किन्ना चिर हुन मेदें ग्राला तेल बनाने पौना?
किन्ना चिर हुन जुलमां ग्राले छांटे पिट्ठी खाने?
किन्ना चिर हुन फाकें मरियै रज्जे होर रजाने॥

किन्ना चिर हुन कंगरेलें दी रुन-झुन सुनदे रौना?
किन्ना चिर हुन ग्रासें ग्राला जाल ए बुनदे रौना?
किन्ना चिर हुन चक्कर गिनने? सारे किट्ठे ग्राग्रो,
इस कोहलू दा बक्खर बनने कोला ग्राप बचाग्रो॥
रूप जुगा दा बदला करदा इक्कै पलटा खाना,
पलें खिनें दी गल्ल छड़ी हुन बिन्द क जोर गै लाना॥

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बेकारी का डंडा भारी जिसको खींचे जाए,
आशा मन की, तन की सुन्दरता सब तेल बनाए।

फाकों के चाबुक खा खा कर आगे बढ़ता जाए,
जीवन की मंज़िल का राही अपनी उमर बिताए।

तिल तिल जलता प्रति दिन यौवन जीवन शूल बना है,
इस के तेली ऐश मनाते यह तो धूल सना है।

नन्हे नन्हे बच्चे जब जब फाकों से घबराएं,
इस कोहलू के निर्मम चक्कर अपनी चाल चलाएं।

लेकिन कब तक कोहलू होंगे मानव बैल रहेंगे,
मजबूरी की ज़ंजीरों की कब तक कैद सहेंगे?

कब तक झूठे विश्वासों के घिरे रहेंगे साए,
कब तक सहनी होगी हमको यह पीड़ा असहाय?

कब तक बेकारी का भारी बोझा ढोना होगा,
कब तक गहन निराशा के बन में यूं रोना होगा?

कब तक सहने होंगे पीठों पर ज़ुल्मों के कोड़े,
कब तक रिसते रहेंगे बोलो ये समाज के फोड़े?

कब तक लोभी अन्याय की गूंजे गी हुँकार,
कब तक इस ढर्रे पर चलता जाएगा संसार?

कब तक चक्कर गिनने होंगे, सारे मिलकर आओ,
इस कोहलू में पिस जाओगे, अपना आप बचाओ?

सांझे पथ पर पांव मिलाकर हम को चलना होगा,
इक झटके में युग का साथी रूप बदलना होगा॥

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

नमां इतिहास

नमां लिखो इतिहास, ओ साथी,
ए इतिहास ते बैंसाबली ऐ राजें ते माराजें दी,
ए इतिहास कसीदा-खानी कलगी आले ताजें दी।
ए रत्तू ने लिखेया राजें तलवारें दे रौलें 'च,
ए जुल्मा दी कत्थ लखोई मुहिमें आली तौलें 'च ॥
ए इतिहास पटार पराना बन्दे बिच्च मलम्मे दे,
भूठे जोड़ मलाइयें इसनै धागे एके थम्मे दे।
ए अन्ना इतिहास कबत्ता, साड़ी गल्ल सुनान्दा नईं,
इस गी अस नईं भाए साथी तां साड़े मन भान्दा नईं ॥
उस बेल्लै बी इस पुर्जा पर लक्खां मानू बसदे हे,
लक्खें नैनें आस नमीं ही लक्खां गै मन हसदे हे।
लक्खें चतर चतेरें इत्थें पत्थर जीन्दे कीते हे,
देसा गितै केई जुआनें जैहर कटोरे पीते हे ॥
दस्सो दुखियां मौरी दी अक्खीं दा पानी कुत्थें ऐं,
गीत सोहाग लटोए जेके उन्दी क्हानी कुत्थें ऐं।
दस्सो मजबूरें दे हौकारें दे जाले कुत्थें न,
गोरी गोरी बाहें दे चूड़ें दे आले कुत्थें न ॥
जो जित्तें लेई हैल बने ओ, लऊ दे धारे कुत्थें न,
जिन्दे स्हारै राज बने दे, ओ अज स्हारे कुत्थें न।
ए पखपाती भूठा पक्का उन्दी गल्ल सनान्दा नईं,
ए भूठा इतिहास पराना तां साड़े मन भान्दा नईं ॥
हुन साड़ा इतिहास लखोना परसें दे लशकारें नें,
हुन साड़ा इतिहास लखोना थोड़ें दी ठन्कारें नें।
हुन साड़ा इतिहास लखोना हल्लें दी ललकारें नें,
हुन साड़ा इतिहास लखोना नमें जुगा दे शारें नें ॥

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

नया इतिहास

नया लिखो इतिहास रे साथी !

यह इतिहास तो वंशावली है सामन्तों राजाओं की,
यह इतिहास कसीदाखानी कलगीधर राजाओं की।

यह इतिहास लिखा सत्ता ने रक्त सनी तलवारों से,
अन्याय की कथा रची रण पीड़ित चीख पुकारों से ।।

यह इतिहास पुराने नक़ली ज़ेवर भरी पिटारी है,
झूठे नाते जोड़ के इस ने अपनी शक्ल संवारी है।

यह अन्धा इतिहास हमारी बात नहीं बतलाता है,
हम इस को नहीं भाये साथी, यह भी हमें न भाता है ।।

उस युग में भी इस धरती पर लाखों मानव बसते थे,
उन नयनों में आस नई थी, लाखों ही मन हसते थे।

लाखों चतुर चतेरों ने पत्थर में जीवन डाला था,
हसते हसते लाखों ने पी लिया ज़हर का प्याला था ।।

तुम से दुखिया माता की आंखों का पानी पूछ रहा,
गीत सुहाग लुटे जो बरबस वही कहानी पूछ रहा ।।

मजबूरों लाचारों की सहमी सी सिहरन पूछ रही,
गोरी गोरी बाहों के चूड़ों की धड़कन पूछ रही।

जो जीतों की खाद बने वह खून के धारे कहां गये ?
जिन के बल पर राज बने वे सबल सहारे कहां गये ?

पक्षपात से भरा कलंकी सच्ची नहीं सुनाता है,
यह झूठा इतिहास पुराना कब सच्चों को भाता है ।।

हम इतिहास लिखें गे साथी मेहनत की झंकारों से,
होगा नव निर्माण हथौड़ों की गहरी ठंकारों से।

रचना होगी इतिहासों की अब हल की ललकारों से,
हम इतिहास लिखेंगे साथी युग के नये इशारों से ।।

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

गरजदा सौन ऐ !

मेरा ए देस ऐ गंगा दा गोद जम्ना दी,
मेरा ए देस ऐ भण्डार खान अमनां दी।
मेरा ए देस ऐ मन्दर रंगीन ब्हारें दा,
मेरा ए देस ऐ इक गीत अमर प्यारें दा।
नेक भेस, नेक रंग, नेक बोलियाँ न,
कुतै ए ईद, कुतै पर्ब, कुतै होलियां न।
हुब्ब जींने दी ऐ थोड़ मिगी प्यारें दी,
तांग दिक्खने दी रौंगलियें ब्हारें दी।
चा बदलें दा लोभ ऐ फुहारें दा,
गीत सुनने गी गांदियें गतारें दा।
लोड़ ऐमनी दी, भांगड़े गी भाखें गी,
असें मानुएं मनुक्खता दे राखें गी।
गरजदा सौन ऐ, पुरे दी पौन चलदी ऐ ।।

कहीं गंगा, कहीं यमुना, धरा की अजब कान्ति है,
मेरे इस देश के कण-कण से झरती विश्व-शान्ति है।
मेरा यह देश है मन्दिर, कई मनहर बहारों का,
मेरा यह देश है संगीत नूतन अमर प्यारों का।
सुहाने वेश, पहनावे सुहानी इस की बोली है,
कहीं है ईद, दीवाली, कहीं गुरु-पर्व, होली है ।।
मुझे है चाह जीवन की, मैं भूखा प्यार पाने का,
बहारों को बुलाने औ' धरा अपनी सजाने का।
मुझे है प्यार बादल से बुलाता हूँ फुहारों को,
तरसते प्राण गीतों को, सुहाने गीतकारों को।
अमन की चाह पर्वों को, अमन की चाह गीतों को,
हमें, इन्सानियत के रक्षकों को, और मीतों को ।।
गरजते मेघ सावन के, है बहती मस्त पुरवाई !

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

श्री वेद पाल 'दीप'

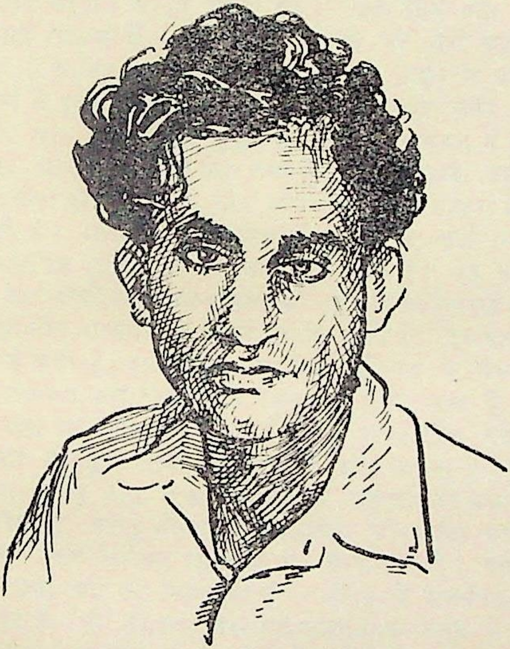

ए गल्ल नईं क कुन जित्तग,

दिक्खो क न्यां ऐ कुत्त पासै !

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

वेद दीप

दीप एक बार (सन् ५१-५२ में) कुछ दिनों के लिए श्रीनगर आया और अपने कवि-मित्र यश शर्म्मा के हां ठहरा। मैं भी उन दिनों श्रीनगर में ही था और प्रायः शाम को यश के हां जाता था। एक दिन गया तो यश की धर्मपत्नी श्रीमती रक्षा बोलीं—देख लीजिए शास्त्री जी मेरा कहना सही निकला। 'दीप' ने साबित कर दिया. कि वह इन (यश) से बड़ा कवि है। मैंने आश्चर्य से पूछा वह कैसे? यश ने हंस कर कहा, सवेरे वह यहां से सब्ज़ी लेने गया था, अब मालूम हुआ है कि अमीराकदल में कोई ट्रक वाला मिल गया और वह जम्मू चला गया है। उसके कपड़े, कागज़ सब यहीं पड़े हैं। सच ही वेद पाल 'दीप' डोगरी के तरुण कवियों में अपना विशेष स्थान रखते हैं। अधिकतर कवि राजनीतिक दलों से कोई सम्बन्ध न रख कर भी सामयिक राजनीति से प्रभावित हो जाते हैं। यह स्वभाविक भी है, परन्तु वेद दीप की काव्य-साधना की यह एक असाधारण विशेषता है कि वे यद्यपि स्थानीय राजनीति से गहरा सम्बन्ध रखते हैं, एक राजनीतिक दल के सक्रिय कार्य कर्त्ता हैं, तथा उसके सप्ताहिक उर्दू पत्र के सम्पादक हैं फिर भी उन की काव्य-साधना राजनीतिक प्रभावों से प्रायः मुक्त है। कुछ कविताएं इस धारणा का अपवाद हो सकती हैं। राजनीतिक दलबन्दी के प्रभावों से कविता को दूर रखना एक बात है और साधना में प्रगतिशील जीवन-दृष्टि रखना दूसरी बात है। दलबन्दी से कविता को बचाना कवि की साधना का गौरव है, परन्तु जीवन की यथार्थता को अपना कर चलना कवि के साहस का, उसके निश्चित दृष्टिकोण का परिचायक है। इस विषय में दीप के अपने शब्द बड़े ही महत्वपूर्ण हैं—"जीवन में राजनीति से बन्धे होने पर भी 'जहाज़ के पंछी' की तरह मेरा मन राजनीतिक समुद्र में दूर दूर तक घूम कर भी साहित्यिक पोत पर ही बसेरा लेता है। मेरे जीवन में काव्य-चिन्तन के ये क्षण बड़े ही महत्वपूर्ण होते हैं।" इसी आत्म-चेतना के कारण 'दीप की कविता में प्रचारात्मकता की गन्ध भी नहीं मिलती।

वेद दीप का साहित्यिक जीवन हिन्दी में कविता लिखने से शुरू हुआ। अपने कालेज-जीवन में ही 'दीप' हिन्दी-कवि के रूप में ख्याति प्राप्त कर चुका था। कालेज-जीवन में यद्यपि उसकी काव्य-साधना में कोई निश्चित प्रवृत्ति तथा अनुभूति की परिपक्वता नहीं हो सकती थी फिर भी उसकी काव्य-प्रतिभा से उसके साथी और अध्यापक आवश्य चमत्कृत होते थे। कालेज में मेरा और दीप का घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। एक-दो वर्ष तक वह मेरी निगरानी में कालेज-पत्रिका के डोगरी विभाग का सम्पादक रहा। उस समय वह हिन्दी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

के साथ साथ डोगरी में लिखने का अभ्यास करने लगा था। 'दीप' ने अपने कौशल से जैसे मुझे अपनी ओर आकृष्ट किया वह एक छोटी परन्तु महत्वपूर्ण घटना है।

कांग्रेस की प्रसिद्ध नेत्री (उस समय किसी राज्य की गवर्नर) श्रीमती सरोजिनी नायडू की मृत्यु का समाचार मिलते ही कालेज में एक शोक सभा हुई। दीप ने उस में पढ़ने के लिए जो कविता (लगभग आध घण्टे में) लिखी, उसकी भाव-गरिमा और कलात्मक अभिव्यक्ति से मैं बड़ा प्रभावित हुआ। उसके बाद कालेज की साहित्यिक गोष्ठियों में मौलिक रचनाओं के साथ साथ दीप ने कई बार प्रसिद्ध अंग्रेजी कविताओं का हिन्दी पद्य में रूपान्तर करके पढ़ा। उन अनुवादों को कालेज के अंग्रेज़ी के प्रोफेसरों ने भी प्राय: सराहा। अनुवाद करना सहज कार्य नहीं होता, विशेषतया विदेशी भाषा की कविता का। इसके लिए अच्छी खासी प्रतिभा की अपेक्षा रहती है। जम्मू के कालेज-जीवन में ही उसकी तीन चार लघु कविता-पुस्तकें छपीं, जैसे : दो सैनिक, हिन्दू जागो, बाल सेना के कौमी तराने और शल्या। इन में 'शल्या' एक लम्बी कविता है जिस में दीप की कवि-प्रतिभा का विकास स्पष्ट झलकता है। कविता एक काल्पनिक प्रेयसी 'शल्या' को सम्बोधित की गई है। शृंगार-रस के अनुरूप इस में माधुर्य और गति-प्रवाह है। कुछ अंश देखिए :—

शल्या तुम पाषाण बड़ी हो,
शल्या तुम नादान बड़ी हो।
शल्या तुम अनजान बड़ी हो,
फिर भी मेरे अतुल प्रेम पर।
फिर भी मेरे पागलपन पर,
शल्या तुम हैरान बड़ी हो।
मुझे इसी पर गर्व बड़ा है॥

अठारह-उन्नीस बरस की आयु में बीस पन्नों की ऐसी लम्बी कविता लिख कर 'दीप' ने अपने लिए जितने विरोधी आलोचक पैदा किए उतने, शायद उस से भी ज्यादा, प्रशंसक भी पैदा किए। जैसे उसने आगे जा कर लिखा:—

मेरी ही बत्त औखी, मित्तरें गी भौ मता ऐ सा
ते मेरे हिरखियेंगी मेरे उप्पर रोह् मता ऐ सा
ते मुखती जिन्दड़ी दी कत्थ गंजलोई ही इस कारण
क् मी अपनी कबल्ली जिन्दड़ी पर गौ मता ऐ सा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

लेकिन दीप का कवि उस समय तक अपनी धरती पर उभरने वाले सांस्कृतिक आन्दोलन से प्रभावित होकर अपनी मातृभाषा (डोगरी) के प्रति आकृष्ट होने लगा था। डोगरी में लिखी उसकी पहली कविता का यह अंश देखिए:—

डोगरे लोकें दी गल्ल के आखनी
रौन्दे बनाईयै सारें कन्ने !
रस्तें'च इन्दै भाएं कण्डे खलारो
मिलदे'न फुल्लें दे हारें कन्नें !

—डोगरे लोगों का क्या कहना, वे सभी से सौहार्द बना कर रहते हैं। उनके रास्ते में काण्टे बिखेरने वालों से भी वे फूलों के हार लेकर मिलते हैं।

१९४८ में राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी की हत्या पर दीप के घायल कवि ने 'बापू दे संघी कपूत' शीर्षक एक लम्बी कविता डोगरी भाषा में लिखी। इसी लम्बी कविता के साथ आप हिन्दी से निकल कर अपने स्वाभाविक क्षेत्र में आ गए। डोगरी भाषा के जीवन में १९४७ के बाद के वर्ष बड़े ही महत्वपूर्ण हैं। उस समय डोगरों की धरती पर उन की संस्कृति भाषा के माध्यम से एक नई करवट ले रही थी। डोगरी की साहित्यिक दरिद्रता दूर हो रही थी। नए तरुण साधक डोगरी संस्था जम्मू के तत्वावधान में संगठित होकर जो कार्य कर रहे थे उसके प्रति दीप जैसा कवि कभी उदासीन नहीं रह सकता था।

दीप दीमागी तौर पर राजनीतिक चेतना लेकर चलता है, परन्तु उस के हृदय में जो कवि रहता है वह जब भी उस के व्यक्त जीवन में समय पाकर अपनी बात कह जाता है तो सुनने वालों के मन के तार छू जाता है।

दीप का जीवन, संघर्ष का जीवन है। उसने अपने लिए जो रास्ता चुना है उसमें कठिनाइयां हैं। उसे उस कठिन डगर पर चलते हुए अपने जीवन के स्थायी उद्देश्य (काव्य-साधना) को निभाना है। हमें भरोसा है कि 'दीप' इसमें सफल होगा।

दीप ने १९५२ में लखनऊ यूनिवरसिटी से हिन्दी में एम०ए० पास किया और वहां से लौट कर राजनीति के चौगान में चले गए। उनके जीवन में २३ जुलाई १९५७ एक महत्वपूर्ण तिथि है। इस दिन डोगरी की पहली कवयित्री सुश्री पद्मा से इनका शुभ विवाह हुआ। इनके पिता श्री अमर चन्द धर्मट्ट इन्कम-टैक्स सुपरिनटैण्डैण्ट थे। अब रिटायर हो चुके हैं।

१५—३—५९
हवेली बेगम, जम्मू।

—राम नाथ शास्त्री

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

नमीं अजादिये !

नमीं अजादिये साड़े 'च आ,
देसागी समझी लै अपना गै घर।

बनियै बरखा, ठंडियां कनियां,
सुक्के गरीबी दे खेतरें बर।

पहाड़ें मदानें बिछें दा इ सबजा,
बनियै गवां बकरियां चर।

के होया जे चिरें देसागी परतियें,
असेईं पच्छान, निं बिन्द बी डर।

जित्थें जरूरत ऐ लोकें गी तेरी,
नमीं अजादिये उत्थें गै चल।

कड़कदी धुप्पा बी खेतरें जित्थें,
नंगै पिण्डै मानु जोता दा हल।

गासा' नें छोन्दी मशीनें 'च जित्थें,
मानु बी बने दा लोहे दी कल।

उच्चियें माड़ियें म्हैलें गी छोड़ी,
पुज्ज पर बिच्छे दे खेतरें ढल।

सुन्ने 'ने जड़े दे देवतेईं छोड़ी,
मिट्टी 'ने सनें दे लोकें 'ने रल।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

यह कविता दीप के पहले प्रयासों में से है। छन्द में शिथिल होकर भी तरुण कवि ने आज़ादी को जिस रूप में आने के लिए कहा है वह विचारोत्पादक है।

ऐ नयी आज़ादी !

नयी नयी प्राप्त हुई स्वतन्त्रते ! हमारे मध्य आ जा। इस देश को अपना ही घर समझ ले। वर्षा की शीतल बून्दें बनकर निर्धनता के शुष्क खेतों में बरस जा। पहाड़ों और मैदानों में सबज़ा बिछा हुआ है, तू इस पर गायें और बकरियां बन कर चर।

क्या हुआ जो देस में बड़ी देर के बाद लौटी हो।
हमें पहचान, हम से डर मत।

जहां लोगों को तुम्हारी आवश्यकता है, ऐ नवीन स्वतन्त्रते ! तू वहीं चल। तू वहां चल जहां, कड़कती धूप में, खेतों में, मानव नंगे तन हल जोतता है। आकाश से छूती हुई मशीनों के साथ २ मानव भी लोहे की एक कल बना हुआ है। ऊंचे राज-भवनों और अट्टालिकाओं को त्याग कर धरती पर बिछे हुए खेतों में उतर। स्वर्ण से जड़े हुए देवताओं से नाता तोड़ कर मिट्टी से सने हुए लोगों से आ मिल !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

लोई हुन्दे कच्चो नीन्दरा उठ्ठी,
निकले दे संझा लैं परतियैं आई।

खाली बोजै हत्थ पाइयैं ओ बोलेया,
"गाड़े पसीने दी इयैं कमाई!"

आरती करनेई दीये गी बाली,
बोली गरीबनो, "करमें दा फल!"

बड्डियें मैहफलें सज्जियैं बौनियें,
सुन हां आनियैं इन्दी बी गल्ल।
मैंहलें'च रातीं बी सूरज गै चमकै,
तू कच्चे कोठें दे दियें'च बल।

जित्थें जरूरत ऐ लोकें गी तेरी,
नमीं अजादिये उत्थें गै चल॥

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

प्रातः का धुंधलका होते ही कच्ची नीन्द से जाग कर घर से निकला हुआ वह (मजदूर) सन्ध्या को लौटा और खाली जेब में हाथ डाल कर बोला, "गाढ़े पसीने की यही कमाई है!"

आरती उतारने के लिए दीप जलाकर वह गरीबनी बोली, "यह हमारे ही कर्मों का फल है!"

ऐ स्वतन्त्रते! तू बड़ी सभाओं में सज-धज कर बैठती है, आकर इन (निर्धनों) की बात भी तो कभी सुन। महलों में तो रात के समय भी सूरज ही चमकता है, तू कच्चे झोंपड़े के दिये में जल।

ऐ नयी आज़ादी जहां लोगों को तेरी ज़रूरत है, तू वहीं चल कर रह।

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अज्ज में नईं कल्ला !

कल्ल में हा कल्ला मेरे साथी निं गनोन अज्ज !

पिप्पला दे पत्तें आंगर, तवी कण्डै बट्टें आंगर,
न्हेरी रातीं तारें आंगर, धारें दे दयारें आंगर,
नदिया दी लैहरें आंगर, फौजियें दे पैरें आंगर।

अनसम्बी लैहरें आला सागर बजोन अज्ज,
कल में हा कल्ला मेरे साथी नईं गनोन अज्ज ॥

बामें बिच जोर, इन्दे मत्थे बिच लो ऐ,
मरने दो जाच इनें, जीने दा बी थौ ऐ।
सिखने दी चाह इनें, दस्सने दा इनें चज्ज,
कल्ल में हा कल्ला मेरे साथी नईं गनोन अज्ज।
टुरदे रे अक्खीं मीटी इक दूए पिच्छें इयां,
जियां सोए सेजला'च रींग टुरैं कीड़ें दी।
जियां रेल पटरी दे उप्पर गै टुरी चले,
पाई दी ही भागें आली कार पक्की कुसै नेई।
अन्ने, गूंगे, बोले, हत्थ इन्दे हे बनोए दे,
भुख ते गलामी दियें रस्सियें जटोए दे।

अज्ज साड़े पैरें कन्ने मिसी कार भागें आली,
कोल्हुआ दे दान्दा आंगर करगे निं कारियां।
नित नित बदला दे समें आले फंग लाइयै,
भरगे अजादिया दे बनें'च डोआरियां।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

आज मैं अकेला नहीं हूँ, संसार भर के श्रमिक कृषिक मेरे साथ समता की मन्ज़िल की तरफ़, जिसे स्वार्थ के गहन अंधकार ने ढक दिया था, बढ़ रहे हैं। 'दीप' की यह कविता विश्व-जनीन दृष्टिकोण को लिए हुए अति सुन्दर कृति बन पाई है।

आज नहीं मैं एकाकी !

कल मैं अकेला था, आज मेरे साथी इतने हो गये हैं कि गिने नहीं जा सकते।

पीपल के पत्तों की भान्ति, तवी (जम्मू शहर ज़िस नदी के किनारे बसा है) के किनारे के (अनगिनत गोल) पत्थरों की भान्ति, पहाड़ों पर देवदार के वृक्षों की भान्ति, नदी की लहरों की भान्ति, फ़ौजी सैनिकों के पैरों की भान्ति, (अनगिनत हैं मेरे साथी)

(आज मेरे साथी) अनगिनत लहरों वाला समुद्र प्रतीत हो रहे हैं।

इन की भुजाओं में शक्ति है, इन के मस्तिष्क में प्रकाश है। ये मरना भी जानते हैं और इन्हें जीने का ढंग भी आता है। इन्हें (नयी चीज़ें) सीखने का चाव है। यह (दूसरों को मार्ग) दिखाने की योग्यता भी रखते हैं।

ये कभी आंखें मूंद कर एक दूसरे के पीछे इस प्रकार चलते रहें जैसे गर्मी के मौसम में (वर्षा ऋतु आने पर) भीगी ज़मीन पर कीड़ों की क़ितारें चलती हुई दिखाई देती हैं।

किसी ने भाग्य की पक्की रेखा इस प्रकार खींच दी थी कि (वे लोग इस पर इस भान्ति चलते रहे) जैसे रेल पटरी पर ही चलती जाए।

यह लोग अन्धे बहरे और गूंगे हो गये थे, इनके हाथ बंधे हुए थे। यह भूख और गुलामी की रस्सियों में जकड़े हुए थे।

आज हमारे पैरों के नीचे आ कर भाग्य की लकीरें मिट गयी हैं। अब हम कोल्हू के बैल की भान्ति काम नहीं करेंगे। हम नित्य बदलते हुए समय के पंख लगा कर, आज़ादी के वनों में लम्बी उड़ानें भरेंगे।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अज्ज साड़ी मित्तिया च हुन नवें प्राण जागे,
छोड़ी लम्मी नीन्दर मजूर करसान जागे।
लम्मी लम्मी ढक्कियें दे सिरें पर बोड़ जागे,
भुके दे चनां पर पीढ़े आले मोड़ जागे।
लखां ते करोड़ां पैर इक्कै पासै जादे,
लखां ते करोड़ां संगे इक्कै गीत गा दे।
मित्तरी दा भेजेया "व्यासा" ने सनेआ सुच्चा,
खुशी कन्ने भुल्लेया नशाता दा चनार उच्चा।
देसा दा शलैपा जिनें इक अख भान्दा नईं,
दूएंईं नि गान दिन्दे, आपूं गाना आन्दा नईं।
फुल्लें पर रो, ते सगन्धि कन्ने बैर ऐ,
देसा दा बरोध जिनेईं सुज्जै अट्ठै प्हैर ऐ।
जिनें षड़जन्तर रचाए सारी दुनिया 'च,
साड़े देसा कोल उन्दी हाम पुज्जी गई ऐ।
जिन्दी खुदगरजी दी नीतियें दे कन्ने अज्ज,
एशिया दे बन्नै बन्नै लाम पुज्जी गेई ऐ।
सामराजी चाल इक मिट्टी दी खडाल ऐ,
टक्कर लै पहाड़ै कन्ने एदी के मजाल ऐ।
कोदी ऐ मजाल जेड़ा औने आला कल रोकै,
काम्में हत्थ थोड़ा ते दराटी रोकै, हल रोकै।
लख तुस भाएं इनें तीलें दियां कन्दां चाढ़ो,
कोदी ऐ मजाल जेड़ा उज्जा आले छल्ल रोके।
तीलें दियें कन्दें कन्ने हाड़ नईं थमोन अज्ज।
कल्ल में हा कल्ला मेरे साथी नईं गनौन अज्ज॥

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

आज हमारी मिट्टी में एक नये प्राण जाग उठे हैं। लम्बी निंद्रा को त्याग कर मज़दूर और किसान जाग उठे हैं। लम्बी २ ढक्कियों के शिखरों पर घने वटवृक्ष जाग उठे हैं। चिनाब नदी पर झुके हुए "पीढ़े" (जम्मू से श्रीनगर जाने वाली सड़क पर इस नाम के स्थान) के रमणीय पर्वतीय मोड़ भी जाग उठे हैं।

लाखों और करोड़ों पांव एक ही दिशा में जा रहे हैं। लाखों और करोड़ों गले एक ही गीत गा रहे हैं। व्यास (पंजाब की नदी) ने मित्रता का पवित्र संदेश भेजा है। हर्ष से निशात बाग (कश्मीर) का ऊंचा चनार भी झूम उठा है।

जिन को देश का सौन्दर्य एक आंख नहीं भाता, जो स्वयं तो गा नहीं सकते किन्तु दूसरों को भी गाने नहीं देते, जिन्हें फलों पर क्रोध है और सुगन्धि से शत्रुता है जो आठों पहर देश की बुराई ही सोचते हैं।

उन्होंने सारी दुनिया में षड़यन्त्र रचाए हैं। अब उन की भुजा हमारे देश के समीप भी पहुँच गई है। उन की स्वार्थपूर्ण नीतियों के कारण आज, एशिया की सीमाओं तक जंग के दूत पहुंच चुके हैं।

जनता की एकता चट्टान का रूप धारण कर चुकी है। सामराज की चाल एक मिट्टी के खिलौने की भान्ति है। इस की क्या मजाल कि पहाड़ से टक्कर ले।

किस की मजाल है कि आने वाले कल को रोक सके। किस की मजाल है कि कामगारों के हाथोंमें उठाए हुए हथोड़े, द्रांतियां और हल रोक सके। तुम तिनकों की दीवारों से रोकने के लाख यत्न करो, लेकिन किस की मजाल है कि उझ (जम्मू के पहाड़ी भाग में बहने वाला नाला) की लहरों को रोके।

तीलियों के बान्ध से यह बाढ़ नहीं थम सकेगी।
कल मैं अकेला था, आज मेरे साथी अनगिनत हैं।

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

बदली गयी दुनिया जां बदली गयी अक्ख !

बन्द ही बरखा व चवै पसार,
कोठी 'च कुड़ी ने सलेया खलार ।
साग तवारियै चाढ़े हे चौल,
घिरा दी संझ ते कम्मा दी तौल ।

माऊ गी ताप ते बब्बा गी खंग,
ठंडू नै डुखै दी अपनी जंघ ।
स्ड़ूं-स्ड़ूं निक्की भैनूं दे नक्क,
सुत्थनूं मैला ते फट्टे दा बक्ख ।
लूर - ब - लूर कुतै फिरै भरा,
राती लै आवै ते मंगै गरा ।

रेडियो बज्जे दा त्रियै मकान,
बाऊ ने उडुरै गीतें दी लान ।
सुनियै बज्जन ओ मना दे तार,
कन्नें 'च कम्बनी पिण्डे 'च ठार ।
ताकुड़े बालियै दीये दी जोती,
आई द्वारी दे कोल खड़ोती ।
गली 'च बिजली दी तारेंगी हलाई,
उडदी चिड़ियें दी मण्डली आई ।
पैहले जे हुन्दा सा, रेआ नि कक्ख,
बदली गई दुनिया जां बदली गयी अक्ख ?

Digitized by eGangotri

जीवन के दुखों से घिरी हुई तरुणी अपने घर की बिगड़ी हुई दशा पर विचार करते हुए अनुभव करती है कि या तो यह दुनियां ही बदल गई है या फिर उस की आंखों का भ्रम है। इन्हीं भावों को 'दीप' ने अपनी इस कविता में प्रस्तुत किया है।

आंखें बदल गईं या यह दुनिया बदल गई है !

वर्षा बन्द हो गई थी लेकिन मकान अभी चू रहा था। लड़की ने अन्दर वाले कमरे में बिखरा हुआ सारा सामान सम्हाल कर रख दिया। चूल्हे पर से साग उतार कर चावल चढ़ा दिये। सांझ घिर रही थी और काम जल्दी समाप्त करना था।

उसकी मां को बुखार था और बापू को सख्त खांसी थी। सर्दी के कारण उसकी (लड़की की) जंघा में पीड़ा थी। छोटी बहिन की नाक बहती रहती थी और रड़ूं २ कर रही थी। सलवार मैली और फटी हुई थी। भाई मारा मारा कहीं फिरता है। रात को आता है और खाने के लिए मांगता है।

(गली में मकानों की कितार में) तीसरे मकान में रेडियो बज रहा है। हवा में गीतों की तान उड़ कर आ रही हैं। सुन कर मन के तार बज उठे हैं। कानों में कपकपी उत्पन्न होती है और सारे तन में शीतलता की लहर दौड़ जाती है।

ताक में दिये की ज्योति जला कर खिड़की के पास आकर खड़ी हो गई। गली में बिजली की तारों को हिलाती हुई चिड़ियों की एक टोली उड़ती हुई आई।

पहले जो कुछ हुआ करता था, अब वह कुछ भी नहीं रहा। (मालूम नहीं क्या हो गया है) दुनिया ही बदल गई है या अपनी आंख ही बदल गई है ? आंख जो पहले देखती थी वह अब दिखाई नहीं देता।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कुड़ियाँ संझां स्कूला दा आई,
अंगना खेडुन ओ छून - छोआई।
छालियां मारी बनेरें गी टप्पन,
मावें दे आलें गी सुनियै छप्पन।
दोरियें बुक्कलें त्वारियै सीत,
चाएं 'ने गान ब्याएं दे गीत।

चेता गवाचे दे समें गी करी,
रोन लेई पेई कुड़ी कम्मागी धरी॥

★

चौपदा

कुसै दे मोकले हिरखै दा मन अधकार मंगदा ऐ
कुसै गी जित्तनै ब्हान्नै कुसै थों हार मंगदा ऐ।
घृणा गी किन्नी होऊ लोड़ हिरखै दे दलासें दी
कुसै लेई प्यार बी आखर कुसा दा प्यार मंगदा ऐ॥

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

लड़कियां सन्ध्या समय स्कूल से वापिस आ कर आंगन में आंख मिचोली खेलती थीं। छलांगें लगा कर मुंडेरों को फांदती थीं। माएं बुलाती थीं किन्तु उनकी आवाज़ सुनकर वे छिप जाती थीं। दुपट्टों को दोहरा करके लपेटतीं और सर्दी से अपनी रक्षा करती थीं। चाव से ब्याह-शादियों में गाये जाने वाले गीत गाती थीं।

बीते हुए समय को याद करके, वो लड़की काम काज को छोड़ कर रोने लगी।

★

चौपदा

मेरा मन किसी के सूने हृदय पर अधिकार करना चाहता है। किसी को जीतने का बहाना है लेकिन सत्य यह है कि किसी से पराजित होना चाहता है। मन में किसी के लिए प्यार भी आखिर इस के बदले में प्यार चाहता है। अनुमान लगाइये घृणा को प्यार के दिलासों की कितनी आवश्यकता होगी।

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बदला नैं सिज्जी दी संञा !

बदला ने सिज्जी दी संझा, में गलियें चा जां !

दूरा दा कुडुआं चेते दे औन फनाके,
पुड़छी लैं हिरखै दी तलियें नै मन आखे,
बाऊ दे चैंचल शारे बी मना गी भाखे,

पुञा खड़ोआं जां बाऊ ने उड्डुरी जां ।

घरें दी द्वारियां भित्त बनेरे सिल्ले,
ठण्डी बाऊ ने बोड़ी दे पत्तर हिल्ले,
कणियें कन्ने मेरे कोटा दे कालर गिल्ले,

चौनें पासै बस पेई दी चुप-चपां ।

बूटें दी सेजला कन्नैं मेरे पैरें ठार,
अखीं'च नींदर चढ़ै दा जियां बखार,
बड़ी तलैटनी पुञ खड़ोनेईं नि थार,

मन ऐ हुट्टे दा थोई जा कुदै बसां ।

जिन्दड़ी बिच नरासा दी संझ बी न्हेरी,
मना दे बद्दल अत्थरूं जन्दे न केरी,
संञ दोआस ऐ दुखें दी, साथन ऐ नेरी,

कन्ने कन्ने मी टोरदी फड़ियै बांह ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

वर्षा में भीगी हुई साँझ में

बादल से भीगी हुई साँझ में मैं गलियों से गुज़र रहा हूँ।

कहीं दूर से स्मृति के झोंके आते हैं। मन करता है इन झोंकों को स्नेह की तलियों से पकड़ लूं। हवा के इन चंचल ईशारों से मेरा मन खूब परिचित है।

धरती पर खड़ा रहूँ या हवा के साथ उड़ जाऊं?

घरों की खिड़कियां दरवाज़े और मुंडेरें भीगी हुई हैं। ठंडी हवा से पीपल के पत्ते हिल रहे हैं। वर्षा की बूंदों से मेरे कोट के कालर भीग गये हैं।

चारों ओर खामोशी छाई हुई है।

भीगे हुए बूटों से मेरे पैर ठंडे हो गये हैं। आंखों में नींद का खुमार है जैसे (मुझे) बुखार चढ़ रहा हो। गीली ज़मीन पर पांव फिसल रहा है। खड़े होने के लिए स्थान नहीं। मन थका हुआ है, कहीं विश्राम के लिए स्थान मिल जाए!

जीवन में निराशा की अन्धेरी सांझ है। मन में उमड़ते हुए बादल आंसू बरसा जाते हैं। सांझ, मेरे दुखों की संगिनी, यह भी उदास है। मेरी बांह पकड़ कर मुझे भी अपने साथ २ चलाती है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

निक्के हुन्दे जियां बेड़े' च कल्ले खड़ोचै,
बाऊ दी लैहरें' च शैनें दी बाज सनोचै,
दिन गोआचे दे आन नि परतियै रोचै,

बीते दे समेंगी परतियै कियां बलां ।

संञ लगी हौली रातीं दी गोदा' च सौन,
हौली जियां, पैर गासा दे पुञा ने छोन,
न्हेरै तलाऊ' च रुखें दे छौरे बसोन,

धारें जियां कुदै बदली करा दियै छां ।

बिजली लोई ने जगे दे घरें' च रोल,
चानती हस्सदी फड़ियै चन्ना दी जौल,
मंजल मेरी कतां ? मी कुत्थूं दी तौल ?

बलगै मी दीयै दी लो ते कच्ची सरां ।।

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

जैसे बचपन में आंगन में अकेले खड़े हों। झंझावात की की लहरों में झांझ बजने की ध्वनि सुनाई देती है। (वो कल्पना का आश्चर्यपूर्ण सुख कहां ?) बीते हुए दिन वापिस नहीं लौटते, (हम) रोते हैं।

बीते समय को कैसे वापिस बुलाऊं ?

संध्या हौले २ रात्रि की गोद में सोने लगी, इस प्रकार धीमे धीमे जैसे आकाश के पांव धरती को छूते हैं। जैसे अंधेरे में वृक्षों के साए सरोवर में विश्राम करने लगते हैं, इस प्रकार धीमे जैसे पहाड़ों कर कोई बदली छांह कर दे !

बिजली की रोशनी से उज्ज्वल घरों में चहल पहल है। चांदनी, चांद के जुड़े हुए दोनों हाथ पकड़ कर हंस रही है। (पत्नी विवाह के समय पति के जुड़े हुए हाथों को पकड़ती है।)

मेरी मन्ज़िल कहा है ? मुझे कहां की जल्दी है ? तो सराय का कच्चा घर और उस में जलते हुए दिये का प्रकाश प्रतीक्षा कर रहा है !

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

गज़लें

(१)

मंजल कतां ऐ कुत पासै, हल्ला नर्मा ऐ कुत पासै ?
ए गल्ल नईं क कुश जित्तग, दिखो क न्याँ ऐ कुत पासै ?
ममता रुलैंदी पैरें'च, हिरखै दी बांह ऐ कुत पासै ?
बलगै दी मंजल ते राही, पुच्छै, सरां ऐ कुत पासै ?
बदनाम असे ते होए सै, उन्दा बी नां ऐ कुत पासै ?
कुस गी ऐ बेल कुन पुच्छै, जा दा समां ऐ कुत पासै ?

(२)

मेरे मनां'च प्यार उंग्रां गै जियां क हा,
तेरा बनें दा थार उंग्रां गै जियां क हा।
ए गल्ल होर ऐ तेरे नईं सुनै दे अज्ज कन्न,
वो गा दा ई गतार उंग्रां गै जियां क हा।
ओ ताजे फुल्ल हे ते ए कलमाए दे न फुल्ल,
रखे दा फी बी हार उंग्रां गै जियां क हा।
बललें दी मैहफलें च तुग्गी दिखियै वि अज्ज,
मीं तेरा इन्तजार उंग्रां गै जियां क हा।
इरखै दी रीत रस्म उंग्रां गै जियां क ही,
कुत्तें दा ओ लंगार उंग्रां गै जियां क हा।
आसा ने दित्ता हत्थ के प्राणें दी फिरी सुरत,
उप्पर दुखें दा भार उंग्रां गै जियां क हा।
जे मुज्जती परैन्त तुसें पुच्छेया ऐ हाल,
दस्सां में के सरकार उंग्रां गै जियां क हा।।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

गज़लें

(१)

मन्ज़िल किधर है किस ओर है ?
अब किस तरफ चढ़ाई करने के ईरादे हैं ?
प्रश्न यह नहीं है कि जीत किसकी होगी,
देखना यह है कि न्याय किस पक्ष में है ?
ममता पैरों के नीचे दरबदर हो रही है,
इस समय स्नेह की बाहं कहां है ?
मन्ज़िल प्रतीक्षा कर रही है और
राही सराय का पता पूछ रहा है ?
हम तो खैर बदनाम हुए,
मगर साथ ही उनकी नेकनामी भी मिटगई ?
किसके पास इतना समय है कि पूछे,
यह समय किस ओर जा रहा है ?

(२)

मेरे मन में तुम्हारे लिए प्यार वैसे ही है जैसे कि पहले था ।
मेरे मन में अब भी तेरे लिए स्थान बना हुआ है ।
यह बात दूसरी है कि तेरे कानों को आज सुनाई नहीं देता,
किन्तु गायक अब भी वैसे ही गा रहा है जैसे कि पहले गाता था ।
वे फूल ताज़ा थे और ये कुम्हलाए हुए हैं,
परन्तु फूलों का हार अब भी पहले की भान्ति सुरक्षित रखा हुआ है ।
तुझे आज बेगानों की महफल में देख कर भी,
मुझे पहले की भान्ति ही तेरा इन्तज़ार है ।
प्यार की रीति और रस्म अब भी वही है जो कि थी,
मेरे वस्त्र वैसे ही फट कर चीथड़े हैं जैसे पहले थे ।
आशा ने हाथों से थाम लिया, प्राणों की दशा सुधरी,
किन्तु सर पर दुखों का भार अब भी है ।
तुम ने एक मुद्दत के बाद मेरा हाल पूछा है,
क्या बताऊं ? वैसा ही हाल है जैसा कि पहले था ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(३)

जे रखचै अपनी जिन्दू दा नि इन्ना ख्याल के हुन्दा ?
बला दी ल्हैर इक इक मारी देचै छाल के हुन्दा ?
असेंई जे आस नईं हुन्दी क पुज्जगे कोल मजलें दै।
तां दस्सो तुस गै इस पैण्डे च साड़ा हाल के हुन्दा।
समें गी बदलने ताईं के आजु किल्ले मानु दी।
इदे लेई पल, ध्याड़ा, पक्ख, मीना, साल के हुन्दा ?
इक ओबी फुल्ल ऐ क्यारी दा जड़ा खिड़दा नि ब्हारें छुट्ट।
दुआ जाड़ें च, पुच्छै, ब्हार, सोया, सेयाल के हुन्दा।
जड़े मेहनत करन आपूं ओ जानन कदर दूएं दी।
के जानन बेल्लड़ अपना ते पराया माल के हुन्दा ?
लहु ओ जेड़ा रंगै लाल हका दे गरोलें गी।
छड़ा ए नाड़ियें दे बिच सुआ लाल के हुन्दा ?
मनां गी जे नईं हिरखा दे जंजालें च सुख थोन्दा।
तां साड़ी जिन्दड़ीं लेई बद्द पी जंजाल के हुन्दा ?

(४)

ऐ कक्ख नईं अपना मेरे मित्तरें ते जारें कच्छ।
इक हिरख गै पल्लै ते ओ मुक्ता ऐ सारें कच्छ॥
उपदेशका, मी छोड़ आपूं बत्त दिखियै टुर।
मेरी ऐ पुजा अक्ख तेरी ऐ चन्न तारें कच्छ॥
मन्दा बड़ा लगदा जदूं मी अपने देसा दा।
मन जाई पुजदा उड्डियै डडलें ते धारें कच्छ॥
ए केड़ी आई ऐ ब्हार उजड़े फुल्ल बागें दे।
ईयां बजोन्दा पुज्जानेआं नमियें ब्हारें कच्छ॥
सीखें च पैंछी बन्द कल्ला गै रेया गान्दा।
वो गीत पुज्जी गे उदे लक्खें ते ज्हारें कच्छ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(३)

यदि अपने प्राणों की इतनी परवाह न करें क्या होगा !
एक एक लहर बुला रही, कूद जाएं तो क्या होगा ?
हमें अगर यह आशा न होती कि मन्ज़िल के निकट पहुँच जाएंगे,
तो आप स्वयं बताइये इस सफर में हमारी क्या दशा होती ?

समय को बदलने के लिए एक अकेले मनुष्य की आयु क्या मुल्य रखती है। इसके सामने पल, दिन, पक्ष, महीने और साल क्या हैं।

एक फूल वो भी है जो बिना बसन्त ऋतु के नहीं खिलता, दूसरा (फूल) जंगल में पूछता है, "बहार ग्रीष्म, शीत यह सब कौन होते हैं।"

जो स्वयं मेहनत करते हैं वही दूसरों की मेहनत की कदर करना जानते हैं। जो हाथ से काम नहीं करते उन्हें अपने और पराए माल की क्या परख हो सकती है।

लहू उसे कहते हैं जो अपनी मेहनत से पैदा किए हुए अनाज के दानों को लाल रंग में रंग दे (संकेत बावा जित्तो के बलिदान की ओर है।) केवल यह धमनियों में ही खौल खौल कर सुर्ख होता रहे, तो यहकौन बड़ी बात है !

हृदय को यदि प्यार के जंजालों में फंस कर सुख प्राप्त न होता,
तो फिर इस से बढ़ कर हमारे जीवन के लिए जंजाल क्या होता।

(४)

मेरे मित्र-हमजोलियों के पास अपना कुछ नहीं है। एक प्यार ही है और वो सब के पास प्रचुर मात्रा में है।

ऐ उपदेशक ! मेरी बात छोड़, तू स्वयं ही मार्ग देख कर चल, मेरी नज़र तो धरती पर है, तेरी आंख ही चांद तारों की ओर लगी है।

जब मुझे अपने देश की याद सताती है तो मेरा मन उड़कर गिरी मालाओं और ढलवानों पर पहुँच जाता है।

यह कौन सी ऋतु आ गई है कि उपवनों के फूल उजड़ गए। ऐसे लगता है जैसे हम नव बसन्त के निकट पहुँच रहे हैं।

सीखचों में बन्द पंछी अकेला ही गाता रहा लेकिन उसके गीत हज़ारों लाखों लोगों के पास पहुँच गये।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(५)

असेईं इक धुन गै लेई आईयै मजलें नेड़ै,
रोकने आले बड़ी हरानी ने मूंह बाकदे रे।
दूर पिच्छें कुत अड़के दे मित्तरें दा मसोस,
जड़े मैहरम बनियै साड़े, असेईं ठाकदे रे।
किज ते गल्ल ही सांझी साड़े हिरखै दी निमित्त,
बखले असें गी किछ, उनें गी किछ आखदे रे।
धोफा अक्खियेंदा छड़ा देई गेईयां उनेईं मजलां बी,
जड़े नजरी कन्ने पैण्डे गी छड़ा नापदे रे।
असें ते झूठ नईं हा बोलना, सच आखना हा,
तद्दै चुप रे ते हरक् गल्ल उन्दी जाचदे रे।
त्रोड़ियै मना दियां संगलां अस निकली गे पे,
हीखियें सुखने दे चेते असेंगी भाखदे रे।

(६)

पड़ां गी उट्ठियै खीरी मन्जल आखां क नेईं आखां।
जड़ी मनदा नईं मन मेरा ओ गल आखां क नेईं आखां!

मेरा नां 'इनकलाब' ए ते में अपना हसाब ला करना।
में सोचा नां समें गी उन 'बदल' आखां क नेईं आखां!

जड़ी होआ दी ए अज्ज, ओ सना करदे न सारें गी।
मी लब्बा दी जड़ी होनी ऐ कल आखां क नेईं आखां!

फसल चंगी ऐ वो रुट्टी नेईं थोए गरीबै गी।
में करसानां दी ए मेहनत सफल आखां क नेईं आखां!

पढ़ी ऐ 'दीप' ने कविता इदे बिच होर सब किश ऐ।
मगर श्रृंगार नईं, इसगी गजल आखां क नेईं आखां!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(५)

हमें एक धुन ही मन्ज़िल के पास ले आई है। हमें मार्ग में रोकने वाले चकित होगए और उनके मुंह आश्चर्य से खुले रह गए।

हमें दूर पीछे पथ में रुके मित्रों का अफसोस है जो हमारे प्रेम का कारण थी, वरना अन्य व्यक्ति हमें कुछ कहते रहे और उन्हें कुछ कहते रहे।

मन्ज़िलें भी उनकी आंखों को धोखा देगईं जो केवल नज़रों से ही मार्ग को नापते रहे। हमने झूठ नहीं बोलना था, सच ही कहना था, इस लिए हम चुप रहे और उनकी हर बात को जांचते रहे।

मन की शृंखलाओं को तोड़ कर हम निकल ही पड़े। आशा के सुहाने सपनों की मधुर स्मृतियां हमें आवाज़ें दे दे कर बुलाती ही रहीं।

(६)

थक कर पढ़ाव को अन्तिम मन्ज़िल कहूं या न कहूँ ? जो मेरा मन नहीं मानता वो बात कहूँ या न कहूं ?

मेरा नाम "इन्कलाब" है और मैं अपना हिसाब लगा रहा हूँ, मैं सोच रहा हूँ कि अब समय को बदल जाने का आदेश हूँ या न दूं।

जो आज बीत रही है इस के बारे में सब सुना रहे हैं, जो कल बीते गी, मुझे नज़र आ रही है। उस के बारे में कुछ कहूँ या न कहूँ ?

फसल अच्छी है मगर इस गरीब को खाने को नहीं मिलता, मैं इस किसान की मेहनत को सफल कहूँ या न कहूँ।

"दीप" ने जो कविता पढ़ी है इस में और तो सब कुछ है, लेकिन इस में शृंगार रस नहीं है, इसे गज़ल कहूँ या न कहूँ ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(७)

दिलै दी गल्ल उन्दे ने करी जन्दे तां चंगा हा,
मना दे बदल अक्खीं' चा बरी जन्दे तां चंगा हा ।

कनारे छोड़ियै छल्लें ने नाते जोड़ने ते हे,
पिरी डबरी च डुबदे जां तरी जन्दे तां चंगा हा ।

असैंई मरने दा थौ ऐ हा तां जीने दी बी ईखी ही,
छड़े जीने कोला जेकर मरी जन्दे तां चंगा हा ।

छपैल उन्दे थों के ही लोकलाजै दा ते भौ ऐ सा,
मनां गी पच्छोत्ता, तान्ने जरी जन्दे तां चंगा हा ।

असें की उस कठोरै लई सकाए फुल्ल हिरखै दे,
फलाई ही कुसै झोली भरी जन्दे तां चंगा हा ।

कनेई ए जित्त जेड़ो रुकी गई ऐ बनी मण्जल,
खरै पुजदे कुदै अग्गें, हरी जन्दे तां चंगा हा ।

(८)

पुच्छदे ओ ए घा के ऐ ।
होर हिरखा' च ला के ऐ ?

तुस बनेओ जिन्दड़ी साड़ी ।
जिन्दड़ी दा बसा के ऐ ।

सीर अनसम्बी शलैपे दी ।
हिरख डूंगा अथाह के ऐ ।

मुंड गै पौन्दा ऐ ईखी दा ।
होर उन्दा ए चा के ऐ ।

मन बी उन पुछदा ऐ हिरखैगी ।
दस तेरी सलाह के ऐ ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(७)

दिल की बात उनसे कर जाते तो अच्छा था। मन में जो बादल छाए थे आंखों से बरस जाते तो अच्छा था।

किनारों को छोड़ कर लहरों से नाता जोड़ना चाहिये था, बाद में डूब जाते या तर जाते, जो भी होता अच्छा था।

हमें मृत्यु की जानकारी प्राप्त थी, इसी लिये जीने की तमन्ना भी थी। यदि मनुष्य को केवल जीने और केवल मरने में से एक चीज़ चुनना पड़ती तो सिर्फ जीने से मर जाना ही अच्छा था।

उन से क्या छिपाना था ? लोक लाज का विचार तो करना ही पड़ता था। मन को पश्चाताप हो रहा है कि दुनिया के ताने चुप करके सह लिए होते तो अच्छा था।

हम ने उस कठोर की प्रतीक्षा करते करते फूल क्यों सुखा डाले। किसी ने झोली पसारी थी उन की झोली उन फूलों से भर देते तो अच्छा था।

यह विजय किस काम की जो अन्तिम मन्ज़िल बन कर रुक गई है। शायद कहीं आगे पहुँचे होते ! यदि हम इस (जीत) से तो हार जाते तो अच्छा था।

(८)

पूछते हो यह घाव कैसा है ? प्यार में और लोभ भी क्या होता है ?

तुम हमारी ज़िन्दगी बने हो, लेकिन ज़िन्दगी का क्या भरोसा है।

सौन्दर्य का स्रोत्त अनन्त है, तो क्या हुआ ? प्यार का सागर भी तो गहरा और अथाह है।

एक इच्छा का आरम्भ ही तो है, चाव और किसे कहते हैं।

अब तो मन भी अपने अन्दर बसे हुए प्रेम से पूछता है, 'अब तुम्हारे और क्या ईरादे हैं ?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सवैये

पखरु उड्डी पे उत चूका ते फुट्टन लेई पेई लो उत धारा,
गैलें मकानें च छेड़ छड़ूका ते आकड़ मारै दा नग्गर सारा।
बिज्जे दे रुक्ख तरेलु ने सिज्जे दे गिज्जे दे बाऊ'ने करैदे शारा,
लम्मी ध्याड़ी दी पींग चड़ी दी ते धरती लैन लगी ए लोआरा ॥

जंगल जाड़ जोआड़ घनेरे हे अज्ज उत्थें इस मानु दा बासा,
सौड़ी बड़ी अज्ज पुज्ज बजोंदी ऐ अजें नि सम्बी ए मानु दी आसा।
समें दै बी अग्गें बद्दा दा मानु हा, परतना पेया ऐ समेंगी पासा,
मानु दे हत्थें ने घड़े दे दिखो हां उड्डुरै दे किन्ने गै चन्न न गासा ॥

———

उस दिशा से पक्षी उड़े। उस पर्वत पर से उजाला फूटने लगा। गलियों मकानों में वातावरण ध्वनित होने लगा। सारा नगर अंगड़ाई ले रहा है। ओस में भीगे हुए पेड़ जाग पड़े हैं। हवा से छेड़-छाड़ करने के आदी हैं, उसे इशारे कर रहे हैं। दिवस का लम्बा झूला तैयार है और धरती एक हुलारा लेने लगी है।

घने जंगल और उजाड़ वीरान पड़े थे। वहां पर आज मनुष्य वसता है। आज धरती बड़ी संकुचित प्रतीत होती है, मगर मानव की आशाएं अब भी असीमि हैं। मनुष्य समय की गति से भी अगे बढ़ चला था, समय को भी इसी कारण बदलना पड़ा है। देखो मनुष्य के हाथ से बने हुए कितने ही चन्द्रमा आकाश में भ्रमण कर रहे हैं।

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सुश्री पन्ना देवी

निकड़े पंगड़, उच्ची उड़ान,
जाईयै थम्मनां कियां समान,
चाननियां गल कियां लानियां !!

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सुश्री पद्मा

पद्मा देवी इस समय अठारह वर्ष की हैं। आज डुग्गर की यह पहली कवयित्री इसी कोमल वय में क्षय रोग के कारण श्रीनगर में चेस्ट डिज़ीज़िज़ हस्पताल (*Chest Diseases Hospital*) में जीवन के लिए संघर्ष कर रही है। डुग्गर की सारी साहित्यिक चेतना उसके स्वास्थ्य के लिए आकुल-व्याकुल है। हम भगवान् से प्रार्थना कर रहे हैं कि तुमने पद्मा के रूप में हमारी इस तहरीक को जो नई किरण दी है उसे जगने-चमकने का अवसर देना।

आज से लगभग चार-पांच बरस पहले की वह शाम मेरी स्मृति में आज भी एक गहरी रेखा बन कर अंकित है जब एक मित्र-कवि के घर पर नए डोगरी-कवि के रूप में मैंने पहली बार पद्मा का कविता पाठ सुना था।

उस समय डोगरी कवियों की संगठित साधना जातीय जीवन का एक महत्व पूर्ण अंग बन चुकी थी। कवियों में नए उत्साह, उमंग और एक आदर्श का अनुराग भरा था। ऐसे समय में नए साधकों का योग मिलना कोई नई बात नहीं लेकिन पद्मा की वह पहली कविता सुन कर हमें लगा था कि इस साहित्यिक आन्दोलन में पद्मा का आगमन उस में कलात्मक कोमलता के गुण को बढ़ावा देने के लिए सहायक सिद्ध होगा।

उस गोष्ठी में पद्मा संकोच से नज़र झुकाए एक कोने में बैठी थी। उस समय वह जम्मू कालेज में ऐफ० ऐस० सी० की छात्रा थी। मुझे याद आया कि मैंने इस लड़की को एक बार पहले भी देखा था जब वह कोई ९-१० बरस की रही होगी।

गोष्ठी में उस समय परिचय का शिष्टाचार निभाया जा रहा था, और मैं अतीत के पर्दों को उठा कर उस दिन तक जा पहुँचा था जिस दिन पद्मा के पिता श्री जयदेव M. A. से मेरी पहली मुलाकात उन्हीं के पैत्रिक-घर पुरमण्डल में हुई थी। उस समय वे राज्य सभा (स्टेट असैम्बली) में शायद मुख्य अनुवादक (*Translater*) के पद पर काम कर रहे थे। मैं वहां एक संस्कृत पाठशाला का नरीक्षण करने गया था। जयदेव जी से पहली मुलाकात में ही मुझे उनकी रसिकता और बहुज्ञता ने मुग्ध कर लिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

स्मृति उनकी विलक्षण थी। भोजन आदि के बाद हम अपने २ बिस्तर पर बैठे ही थे कि उन्हों ने अपने बच्चों—पद्मा और आशु को प्यार से आवाज़ देकर बुला लिया और स्नेह भरे गर्व से उन्हें संस्कृत के श्लोक तथा हिन्दी के पद सुनाने के लिए कहा। दोनों बच्चों को अनेकों सुन्दर सूक्तियां कंठस्थ थीं। मुझे बच्चों के शुद्ध उच्चारण और पद पढ़ने के ढंग को देख कर विस्मय हो रहा था। बच्चों में स्मृति का गुण तो होता है लेकिन पद्मा और आशु की स्मृति मुझे असाधारण लगी। जयदेव जी को अपने वात्सल्य पर सच्चा अभिमान था। और मैं पद्मा की असाधारण प्रतिभा से मुग्ध हो कर सोच रहा था कि ऐसी सन्तान अवश्य ही बड़े भाग्य से मिलती है। ऐसी ही कोमल कलिकाएं अपनी दिव्य सुगन्धि से जाति के चमन को सुरभित कर देती हैं।

एक मित्र मुझे फिर गोष्ठी में खींच लाए। बोले, चाए पीजिए शास्त्री जी, चाए ठण्डी हो रही है। चाए पीते ही मैं फिर विचारों में डूब गया।

सन् १९४७ की वह शाम विद्युत रेखा के समान मेरी स्मृति में कौन्ध गई, जब एक आदमी ने मुझे रोक कर कहा था—शास्त्री जी आपने भी सुना? प्रो० जय देव मार डाले गए !!

"प्रो० जयदेव बड़ू मार डाले गये?" मैं स्तम्भित विमूढ़ उस आदमी की ओर देखता रह गया। मेरी आखों में अचानक दो मासूम चेहरे घूम गये। पं० जयदेव बड़ू उस समय प्रोफेसर होकर मीरपुर में सरकारी (इण्टरमीडियेट) कालेज में काम कर रहे थे। देश-विभाजन के भूकम्प ने धक्के देने शुरू कर दिये थे। मीरपुर से लोग निकल रहे थे। प्रो० जयदेव भी एक लारी की फ्रण्ट सीट पर बैठकर जम्मू आ रहे थे कि रास्ते में डाकुओं ने लारी को रोकने के लिये गोली चलाई। गोली सामने के शीशे को फोड़ कर प्र० जयदेव को लगी और वह वहीं प्राण दे गये।

गोष्ठी में किसी ने कहा—"अच्छा जी, अब पद्मा की कविता सुनिये।" पद्मा, कन्या-सुलभ संकोच से पढ़ रही थी :—

ए राजे दियां मण्डियां तुन्दियां न ?
(क्या यह राज महल आपके हैं ?)

पद्मा कविता की पहली पंक्ति पढ़ कर ही रुक गई कहने लगी :—
"हमारे घर कभी २ एक बूढ़ी भिखारिण आती हैं। उसका दीमाग शायद ठिकाने नहीं है। मुझे 'बुआ' कह कर बुलाती है। दो चार दिन हुए आई

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

और कहने लगी—"की बुआ ? ए राजे दियां मण्डियां तुन्दियां न ?" उस के उस कौतूहल भरे विचित्र प्रश्न ने ही मुझ से यह कविता लिखवाई है। इतना कह कर पद्मा ने जो कविता पढ़ी उसने सभी श्रोताओं को चकित-मुग्ध कर दिया।

मुंह पे दा आ जिनें खूसी लेआ, अनबनेया लहु जिने चूसी लेया,
साड़े भुज्जने तड़पने रोने आला, दिन जिनें शाएं गी दूसी गया,
साड़े कम्बदे हत्थें गी सुट्टी सोटु छुड़ेया अक्खीं अग्गें नि इक लोटु,
जेड़े फरिडयै साड़े पटार लेई गे,
उन्दियां लद्दी दियां घोड़ियां तुन्दिया न ? ए राजें दियां मरिडयां......

"जिन्हों ने मुंह में डाला हुआ भोजन का नवाला भी छीन लिया, हमारा अपरिपक्व लहु ही जिन्होंने चूस लिया, रोते-तड़पते जलते देखकर जिन धनाढयों के मन में दया नहीं होती घृणा बढ़ती है, जिन्होंने हमारे कांपते हुए हाथों पर छड़ियों के प्रहार करके हमारे घर की लुटिया तक 'कुरक' करली, हमारे सन्दूक-पटार भी खाली करके ले गए—(हमारे) सामान से लदी हुई उनकी घोड़ियों को देख कर जैसे कोई हमें ही पूछे, क्यों जी ये घोड़ियां आपकी हैं ?"

इस नन्हीं आत्मा में कैसा विद्रोह है ? यह कैसी पैनी सूझ है ! कैसी सजीव भाषा है !

इस पहली कविता से ही डोगरी के प्रौढ़ कवियों-लेखकों को विश्वास हो गया कि उनके साथ साधना-गगन में उड़ने के लिएं एक और नन्हा पक्षी आ शामिल हुआ है, जिस की बोली की मिठास अपूर्व है, जिस के गीतों में वेदना भी है, गम्भीरता भी, ओज पूर्ण कल्पना या मार्मिकता भी। जिस के पंखों (कल्पना) में नील गगन की गहराइयों में दूर तक पहुँचने की सामर्थ्य है।

पद्मा इस छोटी उमर में ही अनुभूति की जिस तीव्रता को लेकर काव्य-जगत में उतरी, उस से निश्चित था कि उस की रचनाओं को पाकर डोगरी भाषा का आत्मगौरव बढ़ेगा।

डोगरी के पुरुष साधकों को तो पारस्परिक सहयोग से अपनी साधना में काफी सुविधा मिलती थी लेकिन पद्मा अकेले ही अपनी साधना की कठिन पगडंडी पर बढ़ती जा रही थी, २३ जुलाई १९५७ के दिन जब पद्मा का, डोगरी के प्रसिद्ध कवि श्री वेद दीप एम०ए० से विवाह सम्पन्न हुआ तो हमें सब से अधिक इस बात की प्रसन्नता थी कि अपनी अपनी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

साधना में इन दोनों होनहार तरुण साधकों का यह नया नया सम्बन्ध बड़ा सहायक सिद्ध होगा। परन्तु पद्मा विवाह के चन्द महीनों के बाद ही बीमार हो गई और उसकी दशा बिगड़ जाने से उसे हास्पिटल में दाखिल करवाना पड़ा। उसे वहां दाखिल हुए लगभग एक वर्ष होने लगा है सुना है कि अब उस का स्वास्थ्य सुधर रहा है।

डोगरी के सभी कवियों की साधना में उनके अपने २ व्यक्तित्व की छाया भी स्पष्ट झलकती है। पद्मा की साधना में यह बात और भी अधिक सत्य है। उसकी कविताओं में (इस समय तक वह सौ से ऊपर गीत-कवितायें लिख चुकी है) कहीं विस्मय. कहीं सरल भोलापन, कहीं गहरी समझदारी और कहीं अपूर्व साहस अनोखे ढंग से छलकते-चमकते हैं। चौदह-पन्द्रह वर्ष की कवियत्री के मन में क्या था, जब उस ने पूछा था।

निक्के फंगड़ू उच्ची उड़ान,
जाइयै थम्मना कियां समान ?
चाननियां गल कियां लानियां ?

—पंख कोमल हैं, बड़ी ऊंची उड़ान लेनी है! भला आस्मान को कोई कैसे थाम ले? चान्दनी को कैसे गले से लगा लूं?

सरल तरुण्य झूलों का प्रेमी होता है, परन्तु कवयित्री के तरुण मन की साहसपूर्ण लालसा देखिए :-

मन करदा पींगा लोआरा लेइयै,
दौनें पैरुयें अम्बर छुई लैं आऊं!
जड़े दूरा चकान्दे मी ङूठा दस्सी,
चन्नां थमां ओ तारे गै खोई लैं आऊं!!

—मेरा मन चाहता है कि किसी पींग पर हुलारा लेकर अपने पैरों से आकाश को छू लूं। जो दूर से अंगूठा दिखा दिखा कर मेरी हंसी उड़ाते हैं, चान्द से उसके उन सितारों को छीन लूं।

लोक-गीतों का अमृत पीकर पद्मा की वाणी से भी वैसी ही मधुरिमा को छलकते देखिए :-

उडरी जन्दे पखेरुआ! मेरा लेई वो सन्देसड़ा जाएआं!
इयां गलायां मिली गोरी पानियैं,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हाल मन्दे तुस दिक्खी जाग्रो बिन्द ग्रानियैं !
इयां गलायां मिली गोरी बाड़ुयै
ग्रक्खीं लग्गी दियां चन्ने दे टारुयै ।

—उड़ते हुए पंछी ! मेरा यह संदेस लेता जा ! मेरे हृदयेश्वर को यूं कहना कि तुम्हारी गोरी पनघट पर मिली थी, उसकी बड़ी बुरी हालत है, एक बार ग्राकर देख लो । या यूं कहियो कि गोरी खेतों में मिली थी, उस के नयन पहाड़ी के पीछे से निकलते हुए (ग्रपने) चान्द के लिए बेचैन थे । ग्रौर देखिए :-

चुल्लिया पचौलै, कोहलें, खुएं दिएं ढारिएं,
मित्ती दी खनेइयें, त्रुट्टी भज्जी दिएं बारियें
तेरा नां दिनें रातीं लिखदी गै रौन्नियां !

चूल्हे के ग्रासपास, ग्रनाज के पात्रों पर, कुएं की जगत पर, मिट्टी की खान की दिवारों पर, मकान के टूटे-फूटे किबाड़ों पर मैं सदा तुम्हारा नाम लिखती रहती हूँ ।

तूं के भाखे तेरे इक शारे कन्ने
किन्ने चिड़ू उड्डी जन्दे धारें चन्नां
तूं के भाखे तेरे इक लारे कन्ने
हत्थ बाह्रू गुड्डी जन्दे सारे चन्नां !

—तुझे क्या मालूम कि तेरा एक संकेत पाकर (मन के ग्ररमानों के) कितने पक्षी पर्वतों की ग्रोर उड़ जाते हैं । तू क्या जाने कि तेरा एक संकेत पाकर ये कोमल हाथ सारे खेत को गोडने का साहस पा जाते हैं । लेकिन :-

गीत नइयों, सच्चें मुचें समझें तू गीत कुतै !

—ये गीत नहीं हैं ! इन्हें सचमुच केवल गीत ही न समझ लेना । पद्मा के शब्द ग्रपने पाठकों को लक्ष्य करते हैं ।

ऐसी कवयित्री की दीर्घायु के लिए ईश्वर से प्रार्थना कीजिए ।

हवेली बेगम जम्मू
होली—१९५९

—राम नाथ शास्त्री

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

राजे दियां मण्डियां

ए राजे दियां मण्डियां तुन्दियां न ?

आऊं गेई गोआची दी घरै थ्वां,
मेरी जोत खवाची दी बरै थ्वां।

मिगी अन्नी करी जिनें सुट्टेआ हा,
मेरा बाढ़ुए चा बूटा पुट्टेया हा।

मेरे बूटे गी बूर बी पेदा नेथा,
मेरा सज्जन दूर बी गेदा नेथा।

जिनें कम्बदियां डालियां पुट्टी लेईयां,

ओ दन्दल दराटियां तुन्दियां न ?

मुंह पेदा ग्रा जिनें खूसी लेया,
अनबनेया लहु जिनें चूसी लेया।

साड़े भुज्जने तड़पने रोने आला,
दिन जिनें शाएं गी दूसी गेया।

साड़ें कम्बदे हत्थेंगी सुट्टी सोटु,
छुड़ेया अक्खियें अग्गें नि इक लोटु।

जड़े फण्डियै साड़े पटार लेई गे,

ऊं दियां लद्दी दियां घोड़ियां तुन्दियां न ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

पद्मा देवी की यह पहली कविता ही पढ़ कर विश्वास हो जाता है कि इस कवियत्री की कला में कितनी वेदना कितना साहस और कितनी ओजपूर्ण कल्पना है ।

राजा के महल

क्या यह राज महल आप के हैं ?

घर में मेरी कोई उपयोगिता नहीं रही ।
बरसों से मेरी ज्योति बुझ चुकी है ।

जिन्होंने मेरी आंखों की ज्योति छीन ली है ।
जिन्होंने मेरी फुलवारी से पौधे उखाड़ लिए ।

मेरा पौदा अंकुरित भी न हुआ था ।
मेरा साजन मुझ से दूर भी गया न था ।

जिन्होंने कांपती हुई कोमल डालियों को काट कर फैंक दिया

क्या यह दरातियां आप की हैं ।

जिन्होंने मुंह में पड़ा हुआ ग्रास छीन लिया ।
जिन्होंने लहु को इस की अपरिपक्व अवस्था में ही चूस लिया ।

हमारे तड़पते रहने और चिन्ता में जलने वाली
दिन चर्य्या के बारे में सोचने पर भी जिन धनाडय पुत्रों को
दोष लग जाता है ।

हमारे कांपते करों पर लाठियों से प्रहार करके,
हमारी आंखों के सामने एक भी बरतन बाकी न छोड़ा ।
जो हमारे सन्दूक पटारियों को खाली करके सारी पूंजी समेट
कर ले गये,

उन से लदी हुई घोड़े-घोड़ियां आप की हैं ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कन्दां उच्चियां छोन समानै कन्नै
मैहल तकड़े माल खजाने कन्नै।
ए इट्टां सूए रंगें भान्दियां नीं,
साड़े लहुए दा चेता करान्दियां नीं।
साड़ें मूण्डें परा उतरे छतीर जित्थें,
बगे पिण्डे चा परसें दे नीर जित्थें।
जिनें तुप्पा'च सड़ीऐ कन्द चाड़ी,
ए उन्दियां माड़ियां तुन्दियां न ?

बोले कन्नें गी तोफ सनाई गेई,
ओं अज्ज बी बारां बजाई गेई।
मेरे चन्ना दे चढ़ने दा वेला होआ,
कोई छेड़ छड़्का नि गैला होआ।
न गै पैर दौड़ियै लैन गए,
आले सज्जनें दे नईं सैन गए।
अद्दी बत्ता दा घेरियै लेई गेईयां,
ओ लोए दियां कड़ियां तुन्दियां न ?

जिनें साड़े लहुए दे दीये बाली,
चानन करी सुट्टी दी ऐ रात काली।
हस्सै चाननी चन्ना दी जौल फड़ी,
असेंईं दूरा दा दिक्खी ते मखौल करी।
साड़े मनां दे तारड़ु त्रुट्टदे नीं,
जिल्लै बंब समानै पर सुट्टदे नीं।
जिनेंई साड़े गिल्लु बिट बिट दिक्खन,
ओ शैल दियालियां तुन्दियां न ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

ऊंची दिवारें आकाश को छूती हैं।
महल दौलत और खज़ाने से माला माल हैं।
सुर्ख रंग में रंगी यह ईंटें खूब फबती हैं।
इन्हें देख कर हमारे लहु की याद ताज़ा हो उठती है।
हमारे कन्धों पर से ही यहां पर शहतीर उतारे गये।
हमारे तन से पसीना पानी की तरह बहा।
जिन्होंने धूप में जलकर इन दीवारों का निर्माण किया,
क्या उनके यह प्रसाद आपके हैं ?

मेरे बहरे कानों में तोप की आवाज़ ने यह सन्देश दिया कि
मेरी इस उधेड़-बुन में आज भी १२ बजे का समय हो गया।
मेरे चान्द के उदय होने का समय हो गया है।
गली में किसी की पदचाप का शब्द नहीं हुआ।
न ही मेरे पांव किसी को दौड़ कर लेने गये।
(साजन मुझे बुलाते रहे) प्रियतम की आर्त्त पुकार सहन न होसकी।
आधे रास्ते में ही जो प्रियतम को घेर कर ले गईं,
वह लोहे की हत्थकड़ियां आपकी हैं।

जिन्होंने हमारे खून से दिये जला कर,
अंधेरी रात में उजियाला किया हुआ है।
चान्द के दोनों हाथ थाम कर चान्दनी हंसती है।
हमें दूर से देखती है और हमारा हास्य उड़ाती हैं।
हमारे मन के तारे टूट जाते हैं,
जब की आकाश में आतशबाजी और गोले छोड़े जाते हैं।
जिनको हमारे नन्हें मुन्हें बच्चे ललचाई नज़रों से देखते हैं।
वे दीवाली के सुन्दर दृश्य आपके हैं ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

जिनेंई गुड्डी गुड्डी असें हैल दित्ती,
जिन्दे मिट्टी दे घरें दी मैल पीती।
जिनेंई धुप्पा पानी देई सिन्जया हा,
चन्न सुक्केदा मुंह दिक्खी खिन्जेया हा।
मन खिड़या जिसी हा ड्रूर दिक्खी,
साड़ी होई दयाली ही बूर दिक्खी।
अक्खीं बोलियां कुसै दीं घूर दिक्खी,

ए शैल क्यारियां तुग्दियां न ?

जित्थें हक्क कुसैदा होई गे दा,
निक्के हुन्दे दा गै लेई कोई गे दा।
नैन जिसगी दिक्खी पसोई गे दे,
मन अपनै आप बटोई गे दे।
जेदे चेते'च दिन नि रात लब्बै,
जेदा नां लैइयै छेड़ी जान सब्बै।
जेड़ियां बैठियां कौल करार करी,

ए ओकियां आतमा तुन्दियाँ न ?
ए राजे दियां मण्डियां तुन्दियां न ?

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

जिन को खोद खोद कर हमने बीज और खाद डाली,
जिन के मिट्टी के घरौन्दों का हमने गदला जल पिया।
जिनको धूप में पानी देकर सींचा था,
जिनका मुर्झाया हुआ चेहरा देखकर चान्द खीज उठा था।
जिनके अंकुरित हो उठने पर मन खिल उठा था।
जिनके अंकुरों को देख हमने दीवाली मना ली थी।
किसी के क्रोध से घूरती हुई नज़रों से हमारी आंखों ने पूछा,
यह सुन्दर क्यारियां आप की हैं?

जिन पर किसी का अधिकार हो चुका है,
जिनको छोटी अवस्था में ही कोई ले गया है
जिसे देख कर नयन हर्ष से खिल उठे हैं।
स्वयं ही मन एक दूसरे से बट चुके हैं।
जिसकी याद में दिन रात एक हो गये हैं,
जिसका नाम लेकर सब छेड़ जाते हैं।
जो कब की कौल-करार कर बैठीं हैं,
क्या वो आत्माएं आप की हैं?
क्या यह राजमहल आपके हैं?

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

इच्छेया

मन करदा पींगा लोआरा लैइयै,
दौनें पैरुयें अम्बर छुई लैं आँ !
जड़े दूरा चकान्दे मी डूठे दस्सी,
चन्नां थवां ओ तारे गै खोई लैं आँ।

जियां नाड़ू-नाले दिनें रातीं गाई,
टुरी टुरी समुन्दर थम्मी लैन्दे।
जियां चातक सुक्के दे मुंह टड्डी,
इक्क बून्दे लेई धूनियां रमी लैन्दे।

तांमी अम्बर करदा क्यास कर्दे,
आसें आलैं तरुटदी आस कर्दे।
बेजवाने उप्पर बेकआसुएं दा,
अज्ज शैल-शलैपा नि थुई लैं आँ ?
मन आखदा . . . . . .

जड़ी सुट्टी बरेतीं'च जोत थुईयै,
उसी तारें चन्नैं आली लोई ने के ?
जड़ी हिरनी बरेती'च पानी मंगै,
उसी नाले दी बीती ते होई ने के ?

जिसी, न्हेरा ओऐ ते ठुआली आखन,
"उठ्ठहां, आसै दी जोत जगाई लैवां।"
परता थोऐ जित्थों काश पता नि हा,
न्हेरा होई दा न्हेरेई नि कूई लैं आँ ?
मन आखदा . . . . . .

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सरल तारुण्य सदा ही फूलों का प्रेमी रहा है परन्तु सुश्री पद्मा देवी के तरुण मन का साहस इस कविता में देखने योग्य है।

इच्छा

जी करता है झूले का एक हुलारा ले कर दोनों पैरों से मैं आकाश को छू लूं ! जो मुझे दूर से अंगूठा दिखा दिखा कर चिड़ाते हैं चांद से वो तारे ही छीन लूं। किस प्रकार नदी नाले दिनरात गा कर, चलते चलते समुद्र को थाम लेते हैं, किस प्रकार चातक तृषित होंठ खोल कर एक बूंद पाने को धूनि रमा लेते हैं। तब भी अम्बर ने कभी दया की ? मगर जिन के मन में आशा है उनकी आस कभी टूटी ? बेज़बानों पर निर्दयियों के जिस सौन्दर्य-विलास का दबदबा है आज उसे छीन लूं !

जिस ज्योति को उजडस्थल में फैंक दिया गया है उसे चान्द और तारों के प्रकाश से क्या मतलब ? जो हिरनी 'बरेती' में (नदी में बने हुए रेतीले द्वीप) पानी की याचना कर रही है उस के लिए तो नदी के साथ चाहे कुछ भी बीते, उसे क्या फर्क पड़ता है। जैसे अन्धेरा छाया हुआ हो मगर, जगा कर कहा जाए, "उठ तो, आशा की जोत जगाले !" अफसोस मुझे ज्ञात नहीं था मुझे सही उत्तर कहां से मिलेगा (यानी धीरज बन्धाने वाले सब हैं मेरे दुःख दूर करने वाला कोई नहीं)। अन्धेरा चारों ओर है। अन्धेरे को चीर क्यों न आगे बढ़ जाऊं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

आऊं हरान हुन्नी मन्दा हुन्दा कैदा,
जिनें मुंआं दा कदें कोआलेया नईं ।

कदें अपना ठंडा फनाका देईयै,
मिट्टी नीन्दरा जिनें सोआलेया नईं ।

मुंह नि दिक्खेया, नैंन नि दिक्खन ओए,
भरम झूठा सच्चा कदें जाचेया नईं ।

नैंन उठ्ठदे नईं जीब फुट्टदी नईं,
कीयां उन्दे'च जाई बसोई लैं ओं ?

मन आखदा . . . . . .

उनेईं भरम जेकर मेरे हिरखा दा,
तां गवाईं खनेइयां मिट्टी हीन्दरा नी ।

उत्थें बलगी बैंईयै दिक्खां राईयेंगी,
जिन्न खूसी दियां रातीं नींन्दरां नी ।

तेरे हत्थें नें फट्टा दबट्टडु सी-सी,
मुक्कने'च आईयां नेईं लीन्दरां नी ।

तूं एं आ, आनि हत्थ लाडा नें दे,
इनें हत्थुं एईं नैनें नें कुई लैं ओं ।

मन आखदा . . . . . .

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मैं स्वयं हैरान हो जाती हूँ कि उन के विरह का दुख कैसा जिन्होंने मुझे अपने मुंह से कभी बुलाया नहीं। जिन्होंने अपने प्यार का ठंडा झौंका देकर मुझे कभी मीठी नीन्द सुलाया नहीं। लाज से उनका मुंह नहीं देख सकी, उन के नयनों की भाषा को नहीं पढ़ सकी, लेकिन कभी भी उन के स्नेह पर संदेह न किया। नयन ऊपर नहीं उठते, जीह्वा से एक शब्द नहीं फूटता—उनके पास जा कर कैसे विश्राम कर लूं ?

उन्हें यदि मेरे प्यार पर संदेह है तो मेरे प्यार के साक्षी 'खनेइयों' (गांव में बना हुआ ऐसा गढ़ा जिस में से मिट्टी खोदी जाती है) कि मिट्टी में बने हुए निशान हैं। मैं वहां पर बैठ कर प्रतीक्षा करती हूँ और मेरी आंखें उस राही को ढूंडती हैं जिस ने मेरी रातों की नींद छीन ली है। तेरे ही हाथों से फटा हुआ दुपट्टा लेकर सीती रहती हूँ। सी सी कर भी यह चीथड़े खतम होने को नहीं आते।

अब तू ही आजा! अपना हाथ प्यार से मेरे हाथ में दे दे, ताकि मैं इन आंसुओं को तुम्हारे नयनों से पोंछ लूं !

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

माऊ दी पच्छान

जे ओ दिक्खी कुसै बल हस्सी जन्दी,
तेरे ओठड़ु हासे ने खुल्ली पौन्दे।
जे ओ दिक्खी कुसा बल कलपदी ऐ,
तेरे अत्थरूं जानी गै डुल्ली पौन्दे।
जे ओ बैठी दी लब्बै खटोलिये पर,
तुम्मी फड़ियै चूड़ खड़ोन सिखें।
कुतै बैठी दी बैली तूं दिखी लेई,
तुम्मी गोदा ओदी भट बौन सिखें।
जे ते परसा उसी बगी जन्दा कुदै,
तुम्मी दिक्खी ओदे बल्ल रोन सिखें।
जे ओ एठा दा हाम्बियै सद्‌दै तुक्कुी,
तुम्मी हाम्बी हाम्बी एठ पौन सिखें।
जेलै पीड़ी 'च पाई चटान्दी रौन्दी,
हत्थ फड़दा केडी परीता कन्नै।
ओबी गाई-गाई टिप्प लाई रखै,
अखीं अखीं'च बन्नी दी रीता कन्नै।
जे ओ गेई कुतै छोड़ी इक्कले गी,
तुम्मी भाँकियां मारियै बार दिक्खें।
खट्टा हेठ रसोई पचोआड़ सारै,
आन्दे-जन्दे राहियें थवां सार दिक्खें।
जे घड़ी हारी गी परतोई आवै,
ए पलेखा क ऊऐ जां होर कोई।
सिर पुट्टेया, अक्खियें जोत लब्बी,
बलदी हिरखै ने जोत गोआची थोई।
मन ओदा निक्के हत्थु ओदे गै न,
आसा मेदा आले भत्तु ओदे गै न।
पैरु मुंएं'च पाए दे निक्के निक्के,
काले बांवरुं ए छत्तु ओदे गै न॥

पद्मा देवी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मां की पहचान

यदि वह किसी को देख कर हंस देती है तो तेरे होंठ भी हंसी से खिल जाते हैं। यदि वह किसी को देख शोकार्त्त हो उठती है तो तू भी जान बूझ कर आंखों में आंसू लाने का यत्न करता है।

जब वह खाट पर बैठी दिखाई देती है तो तू भी पाया पकड़ कर खड़ा होना सीखता है। कहीं उसे काम से निवृत हो कर बेकार बैठे हुए पाया, तो तुझे झट उस की गोदी में जा कर बैठना आ जाता है।

यदि कहीं उसके मुख पर पसीने की बूंदें झलक जाएं तो तू भी उस की ओर देख कर रोनी सूरत बना लेता है। यदि वह नीचे (आंगन से) बाहें तेरी ओर फैला कर तुझे बुलाती है, तो तू भी (छत से) बाहें फैला २ कर नीचे गिरने का अभिनय करता है।

जब वह 'पीड़ी' पर बैठ कर तेरे चूसने के लिए अपना अंगूठा आगे बढ़ाती है, तो तू कितने प्यार से उसका हाथ पकड़ लेता है। वह भी (लोरियां) गा गा कर आंखों आंखों में बन्धी हुई प्रीत से तेरा मन बहलाती रहती है।

यदि कहीं वह तुझे अकेला छोड़ गई तो तूने घर से बाहिर झांक झांक कर देखना शुरू कर दिया। तुम चारपाई के नीचे देखते हो, रसोई, पिछवाड़े सभी जगह आने जाने वालों की आंखों से यह भेद पढ़ने की कोशिश करते हो।

जब वह कुछ क्षणों बाद लौट आती है तो तू संदेह में पड़ जाता है कि वही है या और कोई। सिर ऊपर उठाते ही तेरी आंखों में नई ज्योति पैदा हो जाती है। स्नेह से प्रकाशित होकर खोई हुई ज्योति जैसे तुम्हें वापिस मिल जाती है।

ऐसा मन उसी का है, यह नन्हें २ हाथ उसी के हैं, यह आशापूर्ण निगाहें उसी की हैं। छोटे २ पैर उसी ने अपने मुंह में डाल रखे हैं। यह काले बांवरे लम्बे २ बालों के गुच्छे उसी के हैं।

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बजोग

इक ते बजोग, बिश्वास बी निं होऐ जदूं,
चौनें पासें जोतिया दे होई जन्दा न्हेरा ई,
पेइयां तरकालां घर आई जा ओ चन्ना हुन,
तेरे बाजा गोरिया दा गलियें'च डेरा ई ॥

गलियां ते अक्खीं रलो पैण्डा बनी जन्दा ऐ,
इत्त चूका लबदा ते उत्त चूका छप्पदा ।
इक चमकारे'ने जदूं न्हेरा होई जन्दा ऐ,
हत्थें'च कोआन्द लैइयै मन ऐ कलपदा ॥

रोगियें बजोगियें दा जीन नईं सखान्दा कुसै,
तुम्मो इक रिश्म बी आनियै निं दित्ती ऐ ।
चेता तुकी करदे कोआलेया जे कुसै ने,
गल्ल ओदी गोरिया दे मनां'च फड़ीती ऐ ॥

लोक आखदे न कोई रौन्दा उत मुलखै'च,
चेता ओदा करो ते बजोग त्रुट्टी जन्दा ऐ ।
मेरा चेता तूं ऐं, मेरे न्हेरे दा ऐं चन्न तूं,
तुगी चेता कीते बाजा जग्ग उट्ठी जन्दा ऐ ॥

मिकी उत्त मुलखै दे राजे कन्नें बास्ता नईं,
जिसी चेता करी तेरा चेता भुल्ली जन्दा ऐ ।
मेरा सुरग उत्थें गै जित्थें ऐ सगन्धी तेरी,
भामें तूं निं कूऐं, अक्खीं पानी डुल्ली जन्दा ऐ ॥

उसी चेता करियै के थोना मी गरीबनी गी,
तेरा चेता आखदा ऐ ओ निं इयै ठीक ऐ ।
जियां एबी आखदे न चेते दा गै हर सा,
तेरी गुज्जी आसें दा गै दूआ परतीक ऐ ॥

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

वियोग

एक तो वियोग हो उस पर जब विश्वास भी उठ जाए तो मन की ज्योति के चारों ओर घोर अन्धेरा छा जाता है। सांझ हो आई है, ऐ मेरे चांद (साजन) घर लौट आ। तेरे बिना (तेरी प्रतीक्षा में) गोरी ने गलियों में डेरे डाल दिये हैं।

गलियां और नज़रें दूर २ तक साथ २ जाती हैं और इन के मिलन से ही तेरी यात्रा का मार्ग बनता है जो कि इस कोने में तो दिखाई देता है किन्तु दूर उस कोने में जाकर कहीं छिप जाता है।

रोगी वियोगियों का जीना लोगों को नहीं भाता। किन्तु तू ने भी मेरे अन्धेरे जीवन में रोशनी की एक किरण भी ला कर नहीं दी। जब तुम्हारी याद में व्यस्त मुझे कोई पुकारता है तो उस की बात मन में बुरी तरह खटकती है।

लोग कहते हैं कोई दूर देश में रहता है (ईश्वर की ओर संकेत है) जिस को स्मरण करने से वियोग का अन्त हो जाता है। मेरी स्मृति तो तुम ही हो, अन्धेरे में मेरे लिये चान्द तुम ही हो। तुम्हें याद किये बिना मेरी दुनिया मिट जाती है।

मुझे इस देश के अधिपति से कोई वास्ता नहीं जिसे स्मरण करने से तुम्हारी याद भूल जाए। यहां तुम्हारी विद्यमानता की सुगन्धि मुझे प्रतीत हो मेरा स्वर्ग तो वही है चाहे तू मुझ से बोले या न बोले—प्यार से मेरी आंखों में आंसू छलछला जाते हैं।

मुझ गरीब को याद कर के उसे क्या मिलेगा। तुम्हारी याद मुझे यही कहती है—"वह नहीं, यह ही ठीक है!" यह भी सुनती हूं कि तुम्हारी स्मृति का हर सांस तुझे प्राप्त कर लेने की छिपी हुई आशाओं का ही प्रतीक है।

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

दौं पक्खरू

लोकें उंग्रां अपनी करैखियें दे जोरा पर,
इनें निक्के गिल्लुएं गी बक्ख करी छोड़ेया।
आत्मा गी इन्दी मारी कुट्टियै कसाइयें इन्दा,
अन-पनछानुएं दे कन्नें लड़ जोड़ेया।
पगड़ियै कम्बदे मसूम हत्थु निक्के निक्के,
किट्ठे गै खड़ोते, जदूं टुरना गै आया हा।
बचपना खेडियै जवानी दे मदानै बिच,
किट्ठे गै बदोते, किट्ठे किट्ठे पैर पाया हा।
जालमें बछाइयै जाल अपनी पंचैती आला,
इत्थों निक्के चिड़ुयें दा दाना-पानी त्रोड़ेया।
किट्ठे दौनें पैलें बारी टप्पी ऐ डोग्राठन तां,
बुद्ध निक्के सिरुएं दी रानी होई गेई ही।
इनें कुन्ज गलियें'च किट्ठे किट्ठे मिट्टी फक्की,
दिनें रातीं गाई गैलां मीर जित्ती लेई ही।
किट्ठे धारां गान्दे जे ओ खिण्डदे हे आपुं बिचें,
लम्मे आले मारी सुत्ती धारागी बजालदे हे।
पुच्छी पता सारें नाले-नाड़ुएं ते बूटें थवां,
सप्पै आली सूंक सुट्टी मनै गी कोआलदे हे।
इनें मिट्ठे चेतें आली गलियें'च गाने आले,
देस-नकाला गै गतारेईं देई छोड़ेया।
इक साह कन्ने लम्मी भाखें आला गीत गाइयै,
टिब्बु थवां डबरी'च किट्ठे छाल मारी ही।
हाड़ै आनी उद्दरा दा छल्लें'च सोआली लेया,
चन्न-तारे-चाननी गवाही लम्मी हारी ही।
सिर लग्गे कुतै बखो-बख गै बतोएं दे हे।
दुनियां दे हाड़ा ने ए निक्का घर रोड़ेया॥

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

दो पंछी

लोगों ने अनुचित रोब और धमकियों के बलबूते पर इ नन्हे प्राणों को एक दूसरे से जुदा कर दिया। कसाइयों ने इ की आत्माओं की हत्या करके इन का अपरिचित लोगों से ल जोड़ दिया।

एक दूसरे के नन्हें नन्हें कांपते हुए मासूम हाथ पकड़ कर इकट्ठे ही खड़े हुए थे जबकि उन्होंने अभी चलना ही सीखा था। बचपन में इकट्ठे खेले, जवानी के मैदानों में भी इकट्ठे बढ़े, और साथ साथ कदम बढ़ाया। ज़ालमों ने अपने झूठे प्रभुत्व का जाल बिछा कर इन दो नन्हें पक्षियों का यहां से दाना पानी छुड़ाया।

जब दोनों ने प्रथम बार दहलीज़ पर से लांघना सीखा तो बुद्धि इन दो नन्हें सिरों की रानी बन गई थी। इन्हों ने कुछ गलियों में इकट्ठे ही धूल फांकी। दिन रात खुशी के गीत गा कर मानों कोई बड़ी भारी विजय प्राप्त कर ली थी। पर्वतमालाओं के मध्य यदि वे इकट्ठे गाते गाते बिछुड़ जाते थे तो ऊंचे स्वरों में एक दूसरे को बुला २ कर सोई हुई गिरिमाला को जगा देते थे। नदी नालों वृक्षों से एक दूसरे का पता पूछ २ कर जब वे थक जाते थे तो लम्बी आहें भर कर अपने अपने मन को बहलाते थे। इन मीठी स्मृतियों की गलियों में गीत गाने वाले गायकों को देस-निकाला ही दे दिया गया।

एक सांस में ऊंचे स्वरों में गीत गाते हुए, टीले पर से नीचे गहरे जल में दोनों ने इकट्ठे ही छलांग लगा दी थी। उधर से भीषण बाढ़ ने आकर दोनों को अपनी लहरों में सुला लिया। चान्द, तारे और चान्दनी इस सारी घटना की गवाही देते हैं। इन दीवानों के सीस अलग अलग कहीं किनारों पर जा लगे थे। संसार रूपी बाढ़ उन के छोटे से घर को बहा कर ले गई।

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

गीत

निकड़े फंगड़ू उच्ची उडान,
जाइयै थम्मना कीयां समान।
चाननियां गल कियां लानियां ?

सस्सू ननानु दे झूठे बयान,
नोन्दी मुण्डी करी सुनै ए जान।
झूठियां रमजां कीयां स्हैनियां ?

अपने देसा दा मारी डोग्रारियां,
बिछड़ी आइयां धियां कोग्रारियां।
इत्थें न तेतरे तत्ते मदान,
बूटें कन्नें नईं जान पछान।
ठंडियां बावां कीयां लैनियां ?

कुत्थें गे न मेरे बाग ते बूटें,
लम्मियां पींगां ते उच्चड़े झूटे।
बंज्जें दी सोटी दा तीर कमान,
डूंगियां धारां ते खुल्ले मदान।

बखलियां गैलां कीयां खैनियां ?

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

गीत

नन्हें पंख, लम्बी उड़ान,
जा कर आकाश को कैसे छू लूं।
चांदनी को कैसे गले लगाऊं ?

सास और ननद के झूठे आरोप, सिर नीचा किए सुनने पड़ते हैं, ये झूठे ताने कैसे सहन करूं।

अपने देस से उड़ कर, कंवारी बेटियां बिछुड़ कर आ गई हैं। यह गर्मी से जलते हुए उष्ण मैदान हैं। पेड़-पौदों से जान पहचान नहीं। ठंडी हवाएं कहां मिलेंगी ?

मेरे बाग बगीचे, पेड़-पौदे कहां गये ? वे लम्बे २ झूलों पर ऊंचे ऊंचे हुलारे अब कहां ? बांस की सोटी का तीर कमान, पर्वत-मालाओं के बीच गहरी घाटियां, हरे २ खुले मैदान स्वप्न बन गये।

अब बेगानी गलियों में मारे २ कैसे भटकना होगा।

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

फुटकर

देहरी

जित्थें तेरे पैरें आली धूड़ कदें खिल्लरी ही,
ऊऐ मेरे मना आली देहर बनी गे दी ऐ।
जेके तेरे हत्थें फुल्ल छूते हे सगन्धि उन्दी,
अज्ज मेरे मत्थे आला फेर बनी गेंदी ऐ।

सच्ची प्रीत

मिक्की इत्त मुलखा दी सच्ची सच्ची कहानी कन्नैं,
मुण्डा दा गै हिरख ते मुण्डा दी परीत ऐ।
अत्थरुएं बिच्च इस झांकदी जवानी कन्नैं,
लो मिक्की सुज्जदी लखोन्दा मेरा गीत ऐ।

देहरी

जहां कभी तेरे चरणों की धूल बिखरी थी वहीं पर मेरे हृदय के लिए देहरी बन गई है। जिन फूलों को तुम ने हाथों से छुआ था उन की सुगन्धि आज मेरे माथे पर "फूलों का गहना" लग गई है।

सच्ची प्रीत

मुझे इस देस की सच्ची २ कहानी से आरम्भ से ही प्रीत है। आंसुओं में से झांकती हुई जवानी द्वारा ही मुझे प्रकाश सुझाई देता है और इस रोशनी में मेरा गीत लिखा जाता है।

★

SPS
891.431 D 46 M

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

K Acadamy of Arts Culture Languages Publication.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE